इकाई 6
1919—1945 के मध्य का विश्व

राष्ट्र संघ

युद्ध मानव जाति के लिए सदैव से ही विनाशकारी सिद्ध हुए हैं। प्रथम विश्व युद्ध के प्रारम्भ होते ही दुनिया में एक ऐसे संगठन की अत्यधिक आवश्यकता अनुभव की जाने लगी जो युद्धों को रोकने में समर्थ हो।

संयुक्त राज्य अमेरिका में राष्ट्रसंघ की स्थापना के विषय में जगह—जगह चर्चाएँ होने लगी। पेरिस शांति सम्मेलन में अमेरिकी राष्ट्रपति वुडरो विल्सन के अत्यधिक प्रयासों से राष्ट्रसंघ की स्थापना हो सकी। इसकी स्थापना विश्व शान्ति की दृष्टि से मानव का एक बड़ा कदम था।

राष्ट्रसंघ की स्थापना :— राष्ट्रसंघ की स्थापना में अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति विल्सन का सर्वाधिक योगदान रहा। 8 जनवरी 1918 को विल्सन ने अपना प्रसिद्ध चौदह सूत्री कार्यक्रम प्रकाशित किया। इसके अन्तिम सूत्र में राष्ट्रसंघ की स्थापना पर विशेष बल दिया गया था। 28 अप्रेल 1919 को शान्ति सम्मेलन के पूर्ण अधिवेशन में राष्ट्रसंघ के प्रारूप को स्वीकार कर लिया गया। 14 फरवरी 1919 को ''राष्ट्रसंघ आयोग ने राष्ट्रसंघ का अन्तिम प्रारूप तैयार किया। 10 जनवरी, 1920 को राष्ट्रसंघ वैधानिक रूप से स्थापित हुआ।

इस संघ का मुख्य कार्यालय स्विट्जरलैण्ड की राजधानी जेनेवा में था।

राष्ट्रसंघ के उद्देश्य :— राष्ट्रसंघ की प्रस्तावना में संघ के उद्देश्यों, सदस्यता की अवस्थाओं, इसकी रचना के सामान्य ढ़ाँचे और दायित्वों आदि का समावेश किया गया था। राष्ट्रसंघ के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित थे—

1. विश्व में सुरक्षा और शान्ति की स्थापना और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के द्वारा दुनिया में होने वाले भावी युद्वो को रोकना।
2. नि:शस्त्रीकरण
3. पेरिस शान्ति सम्मेलन की संधियो का पालन हो, यह सुनिश्चित करना।
4. राष्ट्रों के बीच होने वाले विवादों को शान्तिपूर्ण ढ़ंग से सुलझाना।
5. मानव मात्र के कल्याण के लिए विविध उपाय करना।
6. प्रत्येक कार्य में सभी राष्ट्रों के समान हित का ध्यान रखना।

राष्ट्रसंघ की सदस्यता :— राष्ट्रसंघ के प्रारम्भिक सदस्य 43 थे। इनमें से 30 ने प्रारम्भ में हस्ताक्षर किये और 13 राज्यों को जो कि तटस्थ थे राष्ट्रसंघ की सदस्यता के लिए आमंत्रित किया गया था। भारत भी प्रारंभ से राष्ट्रसंघ का सदस्य था।

राष्ट्रसंघ का दुर्भाग्य था कि इसमें सब महाशक्तियाँ कभी भी शामिल नहीं हुई। राष्ट्रसंघ के निर्माण में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले विल्सन भी अमेरिका को सीनेट (अमेरिका संसद का उच्च सदन विरोध के कारण) राष्ट्रसंघ में शामिल नहीं करवा पाए।

किसी भी राष्ट्र को सदस्य बनाने के लिए साधारण सभा के 43 सदस्यों की सहमति होना आवश्यक था। कोई भी सदस्य दो वर्ष का नोटिस देकर इसकी सदस्यता से पृथक हो सकता था अथवा परिषद् के सर्वसम्मत मत से निष्कासित किया जा सकता था।

राष्ट्रसंघ के अंग :—

1. साधारण सभा 2. परिषद् 3. सचिवालय

इनके अतिरिक्त दो स्वशासी अंग थे:—

1. अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय 2. अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संगठन

इनके अतिरिक्त अन्य सहायक अंग भी थे। जैसे —

आर्थिक और वित्तीय संगठन, संवाद एवं यातायात संगठन, स्थायी शासनादेश या प्रादेश आयोग और बौद्धिक सहयोग का अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान।

1. साधारण सभा :– साधारण सभा राष्ट्रसंघ का एक अत्यंत महत्वपूर्ण अंग था। इसमें संघ के सभी सदस्यों को शामिल किया गया था। सभा में कोई भी सदस्य देश अधिकतम तीन प्रतिनिधि भेज सकता था, किंतु उसका मत एक ही गिना जाता था।

साधारण सभा के कार्य बहुत अधिक व्यापक थे। राष्ट्र संघ का बजट पारित करना, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति करना, परिषद् के अस्थायी सदस्यों को चुनना, राष्ट्रसंघ के नये सदस्य बनाना आदि प्रमुख थे। यह सभा ऐसे प्रत्येक विषय पर विचार करती थी जिससे अन्तर्राष्ट्रीय शांति के भंग होने की आशंका हो। वास्तव में यह सभा राष्ट्र संघ का एक प्रभावशाली अंग थी।

2. परिषद :– परिषद् राष्ट्रसंघ का सर्वाधिक शक्तिसम्पन्न अंग था। साधारण सभा में राष्ट्रसंघ के सभी सदस्य थे किंतु परिषद् में सीमित सदस्य थे। इसमें दो प्रकार के सदस्य थे – स्थायी और अस्थायी। प्रारम्भ में परिषद् में पाँच स्थायी सदस्य बनाये गये जिनमें ब्रिटेन, फ्रांस, इटली, जापान और अमेरिका सम्मिलित थे। किन्तु अमेरिका का राष्ट्र संघ का सदस्य न बनने से इनकी संख्या चार ही रही। इसी प्रकार चार अस्थायी सदस्य बनाये गये जिनमें बेल्जियम, ब्राजील, ग्रीस व स्पेन को शामिल किया गया।

परिषद् के प्रमुख कार्य थे बाह्य आक्रमणों से सदस्य राष्ट्रों की अखण्डता की रक्षा करना, अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का प्रबन्ध करना, सचिवालय को समय–समय पर निर्देश देना तथा निःशस्त्रीकरण की योजना बनाना इत्यादि।

यह राष्ट्रसंघ के कार्यक्षेत्र में सम्मिलित प्रत्येक विषय और विश्व शान्ति सम्बन्धी मसलों पर विचार कर सकती थी।

परिषद् वास्तव में राष्ट्रसंघ का एक महत्वपूर्ण और शक्तिशाली अंग थी जिसके पास अनेक अधिकार थे।

3. सचिवालय :– राष्ट्रसंघ का तीसरा महत्वपूर्ण अंग सचिवालय था। सचिवालय का प्रधान "महासचिव" कहलाता था। इसकी नियुक्ति साधारण सभा की अनुमति से परिषद् द्वारा की जाती थी। सचिवालय सभा एवं परिषद् के ही प्रशासकीय कार्यों को करता था।

यह साधारण सभा और परिषद् के लिए चिन्तनीय मुद्दों की सूचना बनाना, बैठकों की व्यवस्था करना, अनेक प्रशासनात्मक कार्य करना, संधियों का रिकॉर्ड रखना आदि इसके प्रमुख कार्य थे।

4. अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय :– इस न्यायालय का मुख्यालय हेग में स्थापित हुआ। न्यायालय के सदस्यों की संख्या प्रारम्भ में 11 निर्धारित की गई थी किंतु बाद में इसकी संख्या बढ़ाकर 15 कर दी गई। न्यायाधीशों का निर्वाचन परिषद् के बहुमत द्वारा होता था और साधारण सभा के बहुमत द्वारा उन्हें स्वीकृति प्रदान की जाती थी। इनका निर्वाचन 9 वर्ष के लिए होता था।

प्रमुख कार्य :–

1. राष्ट्रों के बीच के विवादों को सुलझाना।
2. नियमों का स्पष्टीकरण और
3. कानूनी मामलों में साधारण सभा और परिषद् को परामर्श देना इसके प्रमुख कार्य थे।

5. अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठनः– श्रमिकों की मांगो के फलस्वरूप जन्म लेने वाले इस संगठन का मुख्यालय जेनेवा में रखा गया। अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों द्वारा मजदूरों की दशा और उनके जीवन स्तर में सुधार लाना इस संगठन का मुख्य उद्देश्य था। यह संघ मजदूरों के हितों की सुरक्षा की दिशा में कार्य करने हेतु बनाया गया था।

यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि वे देश जो राष्ट्र संघ के सदस्य नहीं थे, इस संगठन के सदस्य बन सकते थे। सन् 1934 में अमेरिका द्वारा इसकी सदस्यता लेना इसका उदाहरण है। श्रम संघ का निदेशक राष्ट्रसंघ के महासचिव के प्रति उत्तरदायी था ।

राष्ट्रसंघ के कार्य :–

राष्ट्रसंघ का मुख्य उद्देश्य संसार में स्थायी रूप से शान्ति बनाये रखना और विभिन्न राष्ट्रों के बीच पारस्परिक सहयोग को बढ़ाना था। अपने इस उद्देश्य को पूर्ण करने के

लिए राष्ट्रसंघ को जो कार्य करने पड़ते थे वे निःसंदेह व्यापक थे। राष्ट्रसंघ के मुख्यतः कार्य निम्नलिखित थे–

1. प्रशासनिक कार्य :– वर्साय की शांति सन्धि में विश्व के अनेक विवादित भू–भागों के प्रशासन की व्यवस्था का दायित्व राष्ट्रसंघ को दिया गया था। सार घाटी का प्रशासन और डेजिंग का प्रशासन अस्थायी रूप से राष्ट्रसंघ को सौंपा गया था।

2. मेण्डेट अथवा संरक्षण व्यवस्था :– इसे प्रादेश पद्धति भी कहा जाता है। प्रथम विश्वयुद्ध के अन्त में जर्मनी और टर्की से प्राप्त उपनिवेशों के प्रशासन का उत्तरदायित्व राष्ट्रसंघ को मिला। राष्ट्रसंघ को यह जिम्मेदारी दी गई कि वह इन उपनिवेशों के निवासियों के कल्याण और विकास की व्यवस्था करे। ये उपनिवेश राष्ट्रसंघ ने मेण्डेट व्यवस्था के अन्तर्गत जापान, फ्रांस, बेल्जियम, इंग्लैण्ड आदि देशों के संरक्षण में प्रशासन के लिए दे दिए गए।

प्रतिवर्ष इन देशों को इनके शासन की रिपोर्ट राष्ट्रसंघ को देनी होती थी। राष्ट्रसंघ ने 1920 में एक ''स्थायी प्रादेश आयोग'' की स्थापना की। यह आयोग मेण्डेट व्यवस्था के अन्तर्गत आने वाले भू–भागों के प्रशासन की निगरानी करता था।

इनके अतिरिक्त अल्पसंख्यको के हितों की सुरक्षा करना, विश्व में सामाजिक, आर्थिक और मानवता सम्बन्धी कार्य, तथा अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा सम्बन्धी कार्य प्रमुख थे।

राष्ट्रसंघ की सफलताएँ :–

1. राजनीतिक क्षेत्र में सफलता :– राष्ट्रसंघ के समक्ष संपूर्ण विश्व से अनेक विवादों को लाया गया। इनमें से कुछ विवादों को सुलझाने में राष्ट्रसंघ पूर्ण रूप से सफल रहा। जिन राजनीतिक विवादों को सुलझाने में राष्ट्रसंघ को सफलता मिली उनमें अल्बानिया का सीमा विवाद (1921–24 ई.) ऑलैण्ड द्वीप विवाद (1921 ई.) हंगेरियन विवाद (1923–30 ई.) यावोर्जनो विवाद (1923–29 ई.) लौटेशिया विवाद (1932–33 ई.) और बल्गेरिया तथा यूनान का विवाद (1925–26 ई.) शामिल थे।

इसके अतिरिक्त युद्ध बन्दियों को छुड़ाना और उनके वापस स्वदेश लौटने की व्यवस्था करना भी राजनीतिक क्षेत्र में राष्ट्रसंघ की एक उल्लेखनीय सफलता थी।

2. सामाजिक, आर्थिक तथा मानवता के क्षेत्र में सफलता :– राष्ट्रसंघ ने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और स्वास्थ्य क्षेत्र में निःसन्देह अतिमहत्वपूर्ण कार्य किये। राष्ट्रसंघ ने कई आर्थिक और वित्तीय समितियों की स्थापना की जिन्होंने संपूर्ण विश्व से आँकड़ों और तथ्यों का संकलन किया। इसने सभी देशों को स्वस्थ आर्थिक नीतियाँ अपनाने को प्रेरित किया। राष्ट्रसंघ का बौद्धिक सहयोग भी सराहनीय था। इसकी परिषद् ने बौद्धिक सहयोग के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय समिति की स्थापना की। इसमें विश्व के प्रसिद्ध बुद्विजीवी जैसे प्रो. आइन्सटाइन, मैडम क्यूरी आदि सम्मिलित थे। इसका उद्देश्य विश्व के राष्ट्रों के आपसी सहयोग द्वारा सभ्यता और संस्कृति की उन्नति करना था।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रसंघ ने चिकित्सा क्षेत्र में नारी और बाल कल्याण के क्षेत्र में तथा मादक द्रव्यों पर नियन्त्रण के लिए जो प्रयास किए वे प्रशंसनीय है।

राष्ट्रसंघ की असफलताएँ :–

यद्यपि राष्ट्रसंघ छोटे देशों के आपसी विवादों को सुलझाने में सफल रहा किंतु अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के प्रमुख विवादों को सुलझाने में राष्ट्रसंघ पूर्णतः असफल रहा। इसका मुख्य कारण यह रहा कि बड़े राष्ट्रों ने राष्ट्रसंघ के सिद्धान्तों में विश्वास का ढ़ोंग किया और अपनी स्वार्थपूर्ण नीतियों को लगातार जारी रखा।

राष्ट्रसंघ विलना विवाद (1920–22 ई.) इटली और यूनान के मध्य का कोर्फू विवाद, ग्रानचाको विवाद (1928–33 ई.), मंचूरिया विवाद (1931–32 ई.), स्पेन का गृह युद्ध, चीन–जापान युद्ध (1937–45 ई.), रूसी–फिनिश युद्ध (1939–40 ई.) इत्यादि विवादो को सुलझाने में असफल रहा।

राष्ट्रसंघ की असफलता के कारण

1. राष्ट्रसंघ के सिद्धान्तों में बड़े राष्ट्रों की निष्ठा का अभाव :– राष्ट्रसंघ की स्थापना के समय महाशक्तियों ने विश्व शान्ति एवं सुरक्षा के लिए अनेक उत्तरदायित्व स्वीकार करने में अपनी सहमति जताई थी। सदस्य राष्ट्रों ने संघ के सिद्धान्तों के प्रति निष्ठा रखने सम्बन्धी प्रसंविदा पर हस्ताक्षर किये थे किंतु अवसर आने पर महाशक्तियों ने संघ के इन नियमों का पालन

नही किया।

महाशक्तियों के निजी स्वार्थों और साम्राज्यवादी लिप्सा ने राष्ट्रसंघ के सिद्धान्तों को महत्वहीन बना दिया।

2. उग्र राष्ट्रवाद :– राष्ट्रसंघ की असफलता का एक प्रमुख कारण उग्र राष्ट्रवाद को भी माना जा सकता है। प्रत्येक शक्ति सम्पन्न राष्ट्र स्वयं को अन्य सभी राष्ट्रों से अधिक प्रभुता सम्पन्न समझता था। प्रत्येक राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा के स्थान पर अपनी सम्प्रभुता को अत्यधिक महत्व देता था। संघ के सदस्य राष्ट्रों की राष्ट्रीयता सम्बन्धी विचारधारा अत्यन्त संकीर्ण थी, जिसने अन्तर्राष्ट्रीय सद्‌भाव नष्ट किया।

3. वैश्विक आर्थिक संकट :– 1930 के विश्वव्यापी आर्थिक संकट ने भी राष्ट्रसंघ को बहुत कमजोर किया। इसके परिणामस्वरूप समस्त विश्व में पूँजीवादी शक्तियाँ प्रबल हो उठी। आर्थिक मंदी ने जर्मनी के नाजीवाद और जापान के सैनिकवाद को बल दिया जिसके फलस्वरूप वैश्विक सामाजिक व्यवस्था बिखरने लगी। साम्यवाद विरोधी विचार बढ़ने लगे और फ्रांस, ब्रिटेन व अमेरिका जैसी पूंजीवादी महाशक्तियाँ रूस के हर विरोधी को अपना मित्र समझने लगी। इस तरह तुष्टिकरण की नीति को बल मिला। अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा और शांति के सिद्धान्तों को उपेक्षित किया जाने लगा जो कि राष्ट्रसंघ के मूल आधार थे।

4. वैश्विक सेना का न होना:– राष्ट्रसंघ के पास अपनी कोई सेना नहीं थी। इस स्थिति में अपने निर्णयों का पालन करवाने के लिए संघ को सदस्य राष्ट्रों की सेना पर निर्भर रहना पड़ता था। सदस्य राष्ट्र संघ की किसी भी प्रकार की सैनिक आवश्यकता को पूरा करने की लिए बाध्य नहीं थे।

5. निरंकुश शासन का उदय :– राष्ट्रसंघ की स्थापना के समय सभी राष्ट्रों ने वैश्विक शान्ति, सुरक्षा और सद्‌भाव में अपनी निष्ठा व्यक्त की थी लेकिन विश्व के शक्तिशाली राष्ट्रों ने राष्ट्रसंघ के इन सिद्धान्तों की धज्जियाँ उड़ा दी। इटली, जर्मनी, स्पेन, पुर्तगाल और अन्य यूरोपीय देशों में निरंकुश सरकारों की स्थापना होने लगी।

6. महाशक्तियों का असहयोग :– राष्ट्रसंघ की असफलता का एक मुख्य कारण यह भी रहा कि इसे शक्तिशाली राष्ट्रों का पूर्ण समर्थन नहीं मिल पाया। राष्ट्रसंघ की स्थापना में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अमेरिकी राष्ट्रपति विल्सन ने अदा की थी लेकिन दुर्भाग्यवश राष्ट्रपति विल्सन अमेरिका को राष्ट्रसंघ का सदस्य नहीं बनवा पाए।

इससे राष्ट्रसंघ की नींव प्रारम्भ में ही कमजोर पड़ गई। ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी जैसी महाशक्तियों ने भी अपने संकीर्ण राष्ट्रीय हितों के नाम पर विश्व–शान्ति, सुरक्षा और सद्‌भाव को उपेक्षित कर दिया।

निष्कर्षतः सदस्य राष्ट्रों के असहयोग के कारण राष्ट्रसंघ विश्व शान्ति, सुरक्षा एवं न्याय के अपने उद्‌देश्यों को प्राप्त करने में पूर्णतः सफल नहीं हो सका। तथापि संघ ऐतिहासिक महत्व की एक महान् संस्था के रूप में उभरकर सामने आया। इसने वैश्विक शान्ति, सुरक्षा तथा न्याय की दिशा में संपूर्ण संसार को सोचने के लिए बाध्य किया।

वाल्टर के शब्दों में हम कह सकते हैं कि ''संयुक्त राष्ट्रसंघ के उद्‌देश्यों, सिद्धान्तों, संस्थाओं और पद्धतियों पर तथा इसकी प्रत्येक बात पर राष्ट्रसंघ की स्पष्ट छाप है।''

वर्तमान संयुक्त राष्ट्रसंघ के निर्माण में राष्ट्रसंघ ने बुनियादी भूमिका निभाई।

आर्थिक मंदी

1929 ई. तक आते–आते संसार प्रथम विश्व युद्ध द्वारा प्रदत्त आघातों से उबरने लगा था। जर्मनी की अर्थव्यवस्था पटरी पर लौटने लगी थी। रूस में नव निर्माण की आर्थिक नीतियाँ और योजनाएँ क्रियान्वित की जा रही थी। अखिल विश्व तीव्र गति से आशावाद की ओर कदम बढ़ा रहा था किन्तु यह सब विनाश से ठीक पहले दिखाई देने वाले तीव्र विकास की भांति था।

विश्व परिदृश्य में अचानक ही आश्चर्यजनक परिवर्तन होने लगे। 1929 ई. में विश्व के आर्थिक जगत में विस्फोटक गिरावट देखने को मिली और यहीं से वैश्विक आर्थिक मंदी का प्रारम्भ हो गया। अमेरिकी शेयर बाजार में भीषण गिरावट हो गई। 1929 ई. से 1932 ई. के बीच 5700 बैंक दिवालिया हो गए। मुद्रा का अवमूल्यन हो गया, कृषि उत्पादों के मूल्यों में भारी गिरावट आ गई। कृषकों की स्थिति मजदूरों से भी बदतर हो गई और मजदूरों को रोजगार मिलने बंद हो गए।

सन् 1933 ई. में अमेरिका में राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने नई व्यवस्था (न्यूडील) नामक प्रसिद्ध कार्यक्रम प्रारम्भ किया। अनेक देशों ने कई प्रकार के समझौते करके अपनी अर्थव्यवस्था को पुनर्गठित करने का प्रयास किया। 1929 ई. से 1934 ई. तक सम्पूर्ण विश्व पर आर्थिक मंदी का संकट छाया रहा। इसके पश्चात् धीरे–धीरे ये संकट के बादल हटने लगे और आर्थिक मंदी का भीषण दौर समाप्त हो गया।

आर्थिक मंदी के कारण:–

1. प्रथम विश्व युद्ध का प्रभाव :– आर्थिक मन्दी के लिए प्रमुख विश्वयुद्ध प्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार था। प्रत्येक बड़े युद्ध के बाद निश्चित रूप से आर्थिक संकट का सामना करना पड़ता है। युद्ध के समय सेना के लिए उत्पादों की मांग में अप्रत्याशित वृद्धि होती है और इन मांगों की पूर्ति के लिए उद्योगों का असाधारण विस्तार होता है। औद्योगिकीकरण से रोजगार के अवसर, आय और क्रयशक्ति में वृद्धि होती है। युद्ध की समाप्ति के बाद भी कुछ समय तक तो यह बढ़ोतरी बनी रहती है किन्तु उसके बाद आर्थिक मन्दी का सामना करना पड़ता है। इस युद्ध में लगभग संपूर्ण विश्व ने भाग लिया था अतः आर्थिक मन्दी का सामना भी सम्पूर्ण विश्व को करना पड़ा।

2. उद्योगों का मशीनीकरण :– प्रथम महायुद्ध में सैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भारी मात्रा में जवानों को भर्ती किया गया। इस दौरान श्रम की कमी को पूरा करने के लिए कृषि एवं उद्योगों में नये–नये उपकरणों का आविष्कार किया जाने लगा। धीरे–धीरे श्रमिकों का स्थान मशीनों ने ले लिया। महायुद्ध के बाद बेकार हुए सैनिकों को रोजगार मिलना कठिन हो गया और युद्ध के बाद ये बेरोजगार हो गए। ये सैनिक मूलतः मजदूर व किसान थे। बेरोजगारी के गम्भीर संकट ने आर्थिक मंदी को आमंत्रित किया।

3. उत्पादन की अधिकता :– मशीनीकरण के फलस्वरूप कारखानों की संख्या में वृद्धि हुई। नई मशीनों ने भारी मात्रा में वस्तुओं का उत्पादन किया। युद्ध के बाद कुछ समय तक तो उत्पादन की अधिकता का आभास नही हुआ क्योंकि उत्पादित माल की खपत पुनर्निर्माण में हो गई किन्तु कुछ समय बाद उत्पादन की अधिकता का दुष्प्रभाव दिखाई देने लगा। बाजार अनाज और माल से भर गए, किन्तु बेरोजगारी के कारण खरीददारों का अभाव हो गया। इस कारण से धीरे–धीरे कारखाने बन्द होने लगे। इससे बेरोजगारी की समस्या और भी अधिक विकराल रूप में सामने आने लगी। इन परिस्थितियों में आर्थिक मन्दी का दौर आना स्वाभाविक था।

4. आर्थिक राष्ट्रवाद :– युद्ध के बाद अधिकांश देशों ने आर्थिक राष्ट्रीयता की नीति अपनाई। सभी राष्ट्र अत्यन्त संकुचित और स्वार्थपूर्ण आर्थिक नीतियों का अनुसरण करने लगे। किसी भी राष्ट्र को विश्व अर्थव्यवस्था की चिन्ता नहीं थी। अधिकांश राष्ट्रों ने आयात में कटौती की, विदेशी वस्तुओं पर भारी कर लादकर उनके उपभोग को हतोत्साहित किया। इन कारणों से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार अव्यवस्थित हो गया।

5. सोने का असमान विभाजन :– महायुद्ध के बाद अमेरिका ने सभी कर्जदार राष्ट्रों से युद्ध के समय दिए गए ऋणों की वसूली करना प्रारम्भ कर दिया। अमेरिका अपने ऋण की वसूली माल के स्थान पर सोने के रूप में करने लगा। इस कारण से सोना बड़ी मात्रा में अमेरिका में इकट्ठा होने लगा। अन्य देशों में सोने का अभाव उत्पन्न हो गया। अनेक यूरोपीय देशों को स्वर्ण निर्यात पर प्रतिबन्ध लगाना पड़ा इस स्थिति ने आर्थिक मन्दी को और भी अधिक भयावह बना दिया।

6. अमेरिकी शेयर बाजार में गिरावट :– विश्वव्यापी मंदी का तात्कालिक कारण अक्टूबर 1929 ई. में अमेरिकी शेयर बाजार पर आया आर्थिक संकट था। न्यूयॉर्क के शेयर बाजार में अचानक शेयरों का मूल्य 50 अरब डॉलर तक गिर गया। अचानक इसका प्रचण्ड दुष्प्रभाव अमेरिका के साथ सम्पूर्ण विश्व पर पड़ा। अनेक बैंक और कारोबारी दिवालिया हो गए।

आर्थिक मंदी के परिणाम

सन् 1929 ई. से 1934 ई. तक सम्पूर्ण विश्व पर छाए हुए इस आर्थिक संकट ने समस्त छोटे–बड़े देशों को अत्यधिक प्रभावित किया। विश्व इतिहास पर आर्थिक मंदी के निम्न परिणाम हुए–

1. सैन्यवाद का उदय :– आर्थिक मंदी का दुष्प्रभाव सम्पूर्ण विश्व को झेलना पड़ा। जापान का व्यापार आर्थिक मंदी की भेंट चढ़ गया। आर्थिक मंदी से उत्पन्न परिस्थितियों ने जापान को स्वार्थी और आक्रामक बना दिया। जापान की साम्राज्यवादी

आकांक्षाएँ बढ़ने लगी। सन् 1931 में जापान ने मंचूरिया पर हमला कर दिया। मंचूरिया का अधिकांश भू–भाग जापान के कब्जे में आ गया। जापान ने वहाँ मंचूकुओ सरकार के नाम से एक कठपुतली सरकार स्थापित करके उसे मान्यता दे दी। इसी प्रकार इटली के तानाशाह मुसोलिनी ने भी जनता का ध्यान आर्थिक समस्याओं से हटाने के लिए अबीसीनिया पर आक्रमण किया।

2. लोकतांत्रिक पद्धति से मोह भंग :– आर्थिक मंदी के परिणामस्वरूप विश्व में लोकतन्त्र के प्रति आम जनता का विश्वास डगमगा गया। लोकतान्त्रिक सरकार बेरोजगारी, महंगाई, अस्थिरता और असुरक्षा से निपटने में असमर्थ रही। अतः जनता का इस व्यवस्था से विश्वास उठने लगा। सामान्य जनता पूंजीवाद व लोकतन्त्र के स्थान पर साम्यवाद और फासीवाद की ओर आशा भरी दृष्टि से देखने लगी।

3. अधिनायकवाद का प्रसार :– प्रजातान्त्रिक सरकारों की असफलता ने अधिनायकवादी शासन व्यवस्था को और अधिक बल दिया। आर्थिक मंदी के फलस्वरूप यूरोप के अधिकांश देशों की बागडोर ताकतवर तानाशाहों के हाथ में आ गई। आस्ट्रिया और जर्मनी में निरंकुश शासन की स्थापना हुई। आर्थिक मन्दी के फलस्वरूप पूर्व सरकार से असंतुष्ट जनता ने हिटलर के नाजी दल पर विश्वास व्यक्त किया। सन् 1932 ई. में हिटलर जर्मनी का चांसलर नियुक्त हुआ।

युगोस्लाविया, पोलेण्ड, रूमानिया, यूनान, पुर्तगाल इत्यादि अनेक यूरोपीय देशों में तानाशाही और निरंकुश शासन की स्थापना होने लगी। यदि आर्थिक मन्दी न आई होती तो सम्भवतः अधिनायकवाद का यह विस्फोटक प्रसार नहीं हुआ होता।

4. सरकारी नियन्त्रण में वृद्धि :– मन्दी के परिणामस्वरूप आर्थिक क्षेत्र में सरकारी नियन्त्रण में वृद्धि होने लगी। मन्दी से पूर्व तक जो देश आर्थिक क्षेत्र में अहस्तक्षेप की नीति अपना रहे थे, वो भी मन्दी के परिणामस्वरूप असुरक्षा की भावना से पीडित हो गए। अधिकांश देशों ने आर्थिक उदारवाद की नीति का त्याग किया और आर्थिक क्रियाकलापों पर राज्य का नियन्त्रण कड़ा हो गया।

अमेरिका में रूजवेल्ट की नई व्यवस्था (न्यूडील) भी आर्थिक क्षेत्र में राज्य के बढ़ते हुए दखल को दर्शाती है। इस नीति के फलस्वरूप राष्ट्रपति को विशेषाधिकार प्राप्त हुए और सरकार आर्थिक क्षेत्र में अत्यधिक हस्तक्षेप करने लगी। विश्व के बड़े राष्ट्रों की इस नीति ने विश्व अर्थव्यवस्था को बुरी तरह प्रभावित किया।

5. साम्यवाद का उत्कर्ष :– आर्थिक मंदी से पूंजीवादी राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था खोखली हो गई। वहाँ बेराजगारी और घोर गरीबी बढ़ती ही चली गई किन्तु इसी समय साम्यवादी रूस ने अच्छी प्रगति की। आर्थिक व्यवस्थाओं से असन्तुष्ट जनता साम्यवाद की ओर तेजी से आकर्षित हुई। साम्यवाद तीव्र गति से अन्य देशों में फैलने लगा। पाश्चात्य राष्ट्र साम्यवाद के प्रसार से भयभीत हुए और उन्होंने साम्यवाद के प्रसार को रोकने के अनेक प्रयास प्रारम्भ कर दिये।

6. शस्त्रीकरण की होड़:– आर्थिक मन्दी के फलस्वरूप अधिकांश राष्ट्रों ने अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और सद्भाव की भावना को त्यागकर स्वार्थपूर्ण और संकुचित आर्थिक नीतियाँ लागू की। राष्ट्रों में परस्पर संदेह की भावना बढ़ने लगी। परिणामस्वरूप असुरक्षा की भावना से पीड़ित राष्ट्रों ने अपनी–अपनी सैनिक शक्ति का विकास करना प्रारम्भ कर दिया। पूंजीवादी देशों ने अवसर द्वार पर आया देखकर अत्यधिक मात्रा में शस्त्रों का उत्पादन आरम्भ कर दिया। ये देश धनार्जन के लिये शस्त्रों का भारी मात्रा में निर्यात करने लगे। फिर तो राष्ट्रों में शस्त्रीकरण की प्रतिस्पर्धा सी दिखाई देने लगी जिसका अन्तिम परिणाम हमें द्वितीय विश्वयुद्ध के रूप में देखने को मिला।

7. राष्ट्रसंघ को क्षति :– राष्ट्रसंघ की मजबूती के लिए आवश्यक था कि सभी राष्ट्र आपसी सहयोग और सद्भाव को कायम रखें। विश्व शान्ति और सुरक्षा की दिशा में सभी राष्ट्रों का योगदान आवश्यक था किन्तु आर्थिक मन्दी ने राष्ट्रों का ध्यान वैश्विक सुरक्षा से हटाकर राष्ट्रीय सुरक्षा पर लगा दिया। प्रत्येक राज्य अपने लाभ के विषय में सोचने लगा राष्ट्रसंघ को शक्तिशाली बनाने के लिए जिस प्रकार के उदार और अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण की आवश्यकता थी उसे आर्थिक मन्दी ने नष्ट कर दिया। उसके स्थान पर संकुचित राष्ट्रवादी दृष्टिकोण का उदय हुआ। राष्ट्रसंघ के आदर्शों को उपेक्षित

किया जाने लगा, ऐसी परिस्थितियों में राष्ट्रसंघ का दुर्बल हो जाना स्वाभाविक ही था।

निष्कर्षतः आर्थिक मन्दी ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था को व्यापक रूप में अस्त व्यस्त कर दिया। आर्थिक मन्दी के परिणाम दूरगामी और अत्यन्त घातक सिद्ध हुए। विश्व में अधिनायकवाद के उदय से लेकर द्वितीय विश्व युद्ध तक के घोर अभिशापों की जड़ इस आर्थिक मन्दी में दिखाई देती है।

फासीवाद

'फासीवाद' के लिए समानार्थक 'फासिस्टवाद', 'फासिज्म' जैसे पदों का भी प्रयोग किया जाता है। 'फासिस्ट' शब्द की उत्पत्ति 'फासियो' शब्द से हुई है जो लैटिन शब्द 'फासेज' से बना है यानी 'छड़ों का गट्ठर'। सी.डी.एम. केटलबी के अनुसार, प्राचीन रोम में लोहे की छड़ों के गट्ठर को सत्ता और अधिकार का प्रतीक माना जाता था। डब्ल्यू. सी. लेंगसम के अनुसार, फरसे के चारों ओर लिपटी हुई छड़ों का गट्ठर, बल और शक्ति के रूप में, फासिज्म का प्रतीक–चिन्ह बन गया। विवेच्य शब्द से समूह और शक्ति का चित्र उपस्थित होता है। फासिस्टों ने इसे लाक्षणिक विरासत के रूप में प्राचीन रोम से ग्रहण किया। मुसोलिनी द्वारा गठित संगठन और शासन की विचारधारा को फासीवाद कहा जा सकता है।

बेनिटो मुसोलिनी :– मुसोलिनी का जन्म इटली के रोमाग्ना शहर में 29 जुलाई 1883 ई. को हुआ। उसके पिता अलसेण्ड्रो मुसोलिनी कुम्हार तथा समाजवादी विचारक थे जबकि उसकी माता रोसा मुसोलिनी एक कैथोलिक स्कूल की अध्यापिका थी। वह अपने माता–पिता की तीन संतानो में से सबसे बड़ा था। मुसोलिनी सन् 1901 में 18 वर्ष की आयु में एक स्कूल में अध्यापक बन गया किन्तु कुछ समय पश्चात् ही सन् 1902 में मुसोलिनी अपनी अध्यापक की नौकरी छोड़कर स्विट्जरलैण्ड आ गया। वहाँ वह समाजवादी दल के सम्पर्क में आया तथा उसने सरकार विरोधी आन्दोलन प्रारम्भ कर दिये जिस कारण उसे जेल में डाल दिया गया। जेल से मुक्त होते ही मुसोलिनी ने सन् 1912 में समाजवादी पत्रिका ''अवंती'' का संपादन प्रारम्भ कर दिया।

प्रथम विश्व युद्ध में समाजवादी दल चाहता था कि इटली युद्ध में भाग नहीं ले, किन्तु यह सब मुसोलिनी की इच्छा के विरूद्ध था। इसलिए मुसोलिनी समाजवादी दल को छोड़कर इटली की सेना में भर्ती हो गया और 1915 ई. में युद्ध के दौरान आईसोना में अपनी वीरता का प्रदर्शन किया। 1917 ई. में वह बुरी तरह से घायल हो गया और उसने सेना छोड़ दी। युद्ध की समाप्ति के पश्चात् उसने इटलीवासियों को निराशा से निकालने हेतु ''फासिस्ट काम्बाटिमेटो'' नामक संगठन बनाया।

उसने प्राचीन रोमन साम्राज्य का प्रतीक चिन्ह ''कुल्हाडी सहित लकड़ियों का गठ्ठर'' अपने संगठन के लिए प्रतीक चिन्ह बनाया। उसने काली कुर्ती नाम का दल बनाया। ये शस्त्रधारण करते थे तथा मुसोलिनी के प्रति भक्ति रखते थे। उसने इटली के जमींदार तथा उद्योगपतियों को साम्यवादियों से संघर्ष का वचन दिया। उसके स्वयंसेवकों ने साम्यवादियों पर सशस्त्र आक्रमण करने आरम्भ कर दिए। फासिस्ट दल की संख्या जो 1919 ई. में 22000 थी उसमें वृद्धि होकर 1921 ई. में 5 लाख हो गई।

मई 1921 ई. के चुनाव में फासिस्ट दल ने 35 सीटें जीती तथा नवम्बर 1921 ई. में उसने एक राजनीतिक दल को स्थापित कर लिया। इस विजय के पश्चात् भी मुसोलिनी ने अपने संगठन को मजबूत बनाए रखने के कार्यक्रमों को सुचारू रूप से जारी रखा। तत्पश्चात् उसने अपने दल के साथ वहाँ के राजा विक्टर इमेनुअल तृतीय को रोम पर आक्रमण की चुनौती दी। 27 अक्टूबर 1922 ई. को मुसोलिनी ने 30000 स्वयंसेवकों के साथ रोम पर अधिकार के लिए प्रस्थान कर दिया। गृह युद्ध से बचने के लिए विक्टर इमेनुअल तृतीय ने 30 अक्टूबर 1922 को मुसोलिनी को प्रधानमंत्री नियुक्त कर दिया।

फलस्वरूप मुसोलिनी ने इटली के समस्त पदों पर फासीवादियों को स्थापित कर दिया। उसने सम्पूर्ण शक्तियाँ अपने हाथों में ले ली। प्रेस को प्रतिबंधित कर दिया और सन् 1924 ई. के चुनाव में उसके दल फासिस्ट पार्टी ने पूर्ण बहुमत प्राप्त कर लिया। अब मुसोलिनी ने अपने आप को इटली का अधिनायक घोषित कर दिया।

फासीवाद के उदय के कारण :–

1. वर्साय सन्धि से उत्पन्न निराशा :– पेरिस शांति सम्मेलन में इटली को गहरी निराशा और असंतोष का सामना करना पड़ा क्योंकि वर्साय की संधि में मित्रराष्ट्रो ने इटली को जो क्षेत्र

देने का वचन दिया था वह उसे मित्रराष्ट्रो के विश्वासघात के कारण नहीं मिले इससे इटली की जनता में निराशा और असंतोष व्याप्त हो गया और इसका कारण जनता ने इटली में एक कमजोर जनतंत्र को बताया तथा इसका सर्वाधिक फायदा मुसोलिनी के फासीस्ट दल को प्राप्त हुआ।

2. शिथिल अर्थव्यवस्था :– प्रथम युद्ध के पश्चात् मिली निराशा के फलस्वरूप इटली की आर्थिक स्थिति में गिरावट आने लगी। चारो ओर बेरोजगारी फैल गयी जिससे वहां के मजदूर व सैनिक बेरोजगार हो गये। जर्मनी ने युद्ध में उसकी फसल को नष्ट कर दिया था। उस पर 12 लाख डालर का ऋण था। इटली की मुद्रा में 70 प्रतिशत गिरावट आ गई। मंहगाई अपने चरम पर पहुँच गई। उद्योग, व्यापार, कृषि आदि को भी बहुत हानि हुई तथा आम लोगों का जीवन निर्वाह मुश्किल हो गया। इस कारण इटली की जनता में तत्कालीन सरकार के प्रति विद्रोह का जन्म हुआ।

3. साम्यवाद से प्रभावित इटली :– इटली में साम्यवाद का प्रभाव बढ़ रहा था। वहाँ की जनता के मन में वर्साय की सन्धि के प्रति असंतोष था। इस कारण साम्यवादी दल ने वहाँ की जनता को यह विश्वास दिलाया था कि वह इटली को सशक्त बनाएगा। किन्तु इसका फायदा फासिस्टवादी मुसोलिनी ने ले लिया और वहाँ की जनता मुसोलिनी के पक्ष में हो गई।

4. दार्शनिक हीगल की विचारधारा का प्रभाव :– हीगल के विचारो की मान्यता थी कि वह व्यक्ति से ज्यादा राज्य को महत्ता देता था। उसके अनुसार व्यक्ति राज्य के अनुशासन में रहकर ही अपनी श्रेष्ठता की ओर अग्रसर हो सकता है। उसने राज्य को ईश्वरीय रूप बताते हुए कहा कि उससे कभी भी त्रुटि नहीं हो सकती। ये सब विचारधाराएँ जर्मनी में प्रसारित हो रही थी जिसका लाभ मुसोलिनी को मिला और वहाँ की जनता ने उससे सहमति जताई।

5. शक्तिशाली शासक की आवश्यकता :– इटली की तात्कालीन स्थिति अत्यंत भोचनीय थी। वहाँ के प्रत्येक वर्ग में असंतोष व्याप्त था। जनता में अराजकता की स्थिति का निर्माण हो रहा था। इस परिस्थिति में वहाँ के लोग एक ऐसे शासक की आकांक्षा कर रहे थे जिसका व्यक्तित्व उनके राष्ट्र की स्थिति में सुधारात्मक साबित हो और यह सब उनको मुसोलिनी के व्यक्तित्व में दिखाई दिया।

6. इटली में अस्थिर सरकार का होना :– इटली में उस समय की परिस्थितियों के कारण वहां के मंत्रिमंडल अपनी स्थिर सरकार बनाने में नाकाम रहे। परिणामस्वरूप वहाँ की जनता जनतंत्र से अपना विश्वास खोने लगी। इन परिस्थितियों में मुसोलिनी ने उन्हें स्थिर सरकार देने का विश्वास दिलाया।

7. इटली की साम्राज्यवादी लिप्सा :– इटली प्रारंभ से ही अपने साम्राज्य में वृद्धि करने का आकांक्षी था। वह भूमध्यसागर में रोमन झील बनाना चाहता था तथा 1896 ई. में उसने अबीसीनिया पर जो हमला किया उसमें भी वह परास्त हुआ।

मुसोलिनी ने साम्राज्य को बढ़ाने की इटली की आकांक्षा को पूरा करने के लिए इटली को आश्वस्त किया।

8. मुसोलिनी का इटली की राजनीति में प्रवेश:– तात्कालीन परिस्थितियों में जब इटली की जनता के मन में असंतोष, आक्रोश व अराजकता व्याप्त थी। उस समय इटली की राजनीति में मुसोलिनी का प्रवेश हुआ। उसका उद्बोधन अत्यन्त सम्मोहक था जो कि लोगों को बहुत अधिक प्रभावित करता था। उसके प्रबल व्यक्तित्व से जनता आकर्षित होती थी। इस कारण जनता को मुसोलिनी में अपने इटली को उन्नत करने की प्रत्येक संभावना स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती दिखाई दी।

परिणाम :–

1. अधिनायकवाद की स्थापना :– मुसोलिनी ने सत्ता में आते ही यह घोषित कर दिया कि ''हम अनन्त शान्ति की मूर्खता को अस्वीकार करते है, हमें सदैव शक्ति सम्पन्न होना चाहिए'' और इसके पश्चात् 1926 में उसने स्पष्ट कह दिया कि ''हम भूमि के भूखे है क्योंकि हमारी जनसंख्या में वृद्धि हो रही है और हम ऐसा चाहते भी है।'' शक्ति व अधिनायकवादी भावनाओं के द्वारा मुसोलिनी ने राष्ट्रसंघ को बहुत कमजोर बना दिया फलस्वरूप वैश्विक माहौल तनावग्रस्त हो गया।

2. साम्यवाद विरोधी आन्दोलन में तेजी :– मुसोलिनी ने इटली में साम्यवाद के बढ़ते हुए प्रभाव का लाभ उठाकर ही जीत अर्जित की थी और इसके बाद वह रूस व साम्यवाद का विरोधी हो गया। परिणामस्वरूप इटली में साम्यवाद विरोधी आंदोलन में तीव्रता आयी।

3. प्रजातन्त्र विरोधी विचारों का प्रसार :— इटली में मुसोलिनी के सत्ता में आते ही उसने इटली का विकास करने के लिए कठोर कदम उठाए। जिससे लोगों का प्रजातंत्र से बिल्कुल विश्वास उठ गया और पड़ोसी राष्ट्रों के भी अधिनायकवाद के पक्ष में विचार प्रबल होने लगे। परिणामस्वरूप स्पेन व जर्मनी में भी अधिनायकवाद की स्थापना हो गई।

4. तुष्टिकरण की नीति :— मुसोलिनी के बढ़ते हुए प्रभाव से यूरोप के अधिकांश राष्ट्रों में भय का वातावरण परिलक्षित होने लगा और पूंजीवादी राष्ट्रों ने इटली के प्रति तुष्टिकरण की नीति अपनाई।

5. शक्तिशाली सेना का गठन :— इटली की जनता में पेरिस शान्ति सम्मेलन के विरूद्ध असंतोष था क्योंकि इस सम्मेलन ने उसको वैश्विक जगत् में अपमानित किया था। इस कारण मुसोलिनी का अब सबसे प्रमुख उद्देश्य था कि वह पुनः वैश्विक जगत् में इटली की प्रतिष्ठा को कायम करें। इस कारण सन् 1937 ई. में उसने अपने उद्बोधन में घोषित कर दिया कि–

''फासीवादी इटली का प्रमुख कर्त्तव्य अपनी समस्त जल, थल और वायु सेनाओं को हर समय तैयार रहने की स्थिति में अवस्थित करना है। हमें इतना तत्पर रहना होगा कि हम पाँच लाख व्यक्तियों को एक क्षण में पुनः शस्त्र सज्जित कर सके। तभी हमारे अधिकारों और हमारी मांगों को मान्यता प्राप्त होगी। इस घोषणा से स्पष्ट हो गया कि इटली अपने साम्राज्य का विस्तार करना चाहता है।''

6. अन्य राष्ट्रों के प्रति कूटनीति :— मुसोलिनी जानता था कि ब्रिटेन व फ्रांस उसके प्रतिद्वन्द्वी है। इस कारण उसने उन दोनों राष्ट्रों को एक–दूसरे के प्रति तथा सोवियत रूस के विरूद्ध भड़काने के लिए षड्यंत्र रचा। पश्चिम के राष्ट्रो को कमजोर बनाने के लिए उसने जर्मनी का सहयोग लेकर ''कॉमिन्टर्न विरोधी'' समझौता किया। स्पेन को साम्यवाद से सुरक्षित करने के बहाने उसने ब्रिटेन व फ्रांस में भी हस्तक्षेप किया। यह सब कार्य उसकी अन्य राष्ट्रों के प्रति कूटनीति का परिचय देती है।

7. लोसाने की सन्धि :— यह सन्धि यूनान व इटली के मध्य सन् 1923 में हुई जिसमें उसने पेरिस शांति सम्मेलन में यूनान को दिये हुए अपने क्षेत्र (रोड्स व डोडेकमीज द्वीप) पुनः प्राप्त कर लिये।

8. इटली व फ्रांस में मतभेद :— प्रथम महायुद्ध में इटली ने विजेता राष्ट्रों में अपना स्थान ग्रहण किया था किन्तु फ्रांस, ब्रिटेन व अमेरिका के विरोध के कारण उसे अपमान का सामना करना पड़ा। उसे उसके अपेक्षित क्षेत्र प्रदान नहीं किये गये व लूट का भी पर्याप्त हिस्सा प्रदान नहीं किया गया। इस कारण फ्रांस व इटली में पहले से ही मतभेद थे। मुसोलिनी के सत्ता में आ जाने के बाद उसने भूमध्यसागर में फ्रांस के प्रभुत्व को चुनौती दी। उसने फ्रांस के अधिकृत कॉर्सिका, सेवॉय और नीस पर भी अपना दावा प्रस्तुत किया। भूमध्यसागरीय प्रदेश में एक इटालियन नौ–सैनिक अड्डे की स्थापना को लेकर भी विरोधी भाव उत्पन्न हुए। इस कारण उन दोनों राष्ट्रों के बीच मतभेद और भी गहरे हो गये।

लैंगसम के शब्दों में ''युद्धोतर प्रारंभिक वर्षों में इटली के सबसे अधिक खतरनाक वैदेशिक सम्बन्ध फ्रांस के साथ रहे।''

9. इटली का अबिसीनिया पर आक्रमण :— मुसोलिनी अपने साम्राज्य का विस्तार करना चाहता था। वह जानता था कि यह कार्य युद्ध व आक्रमण द्वारा ही पूरा किया जा सकता है। उसने इटली की जनता के मन में भी इस वृत्ति का विकास कर दिया था। सन् 1935 ई. तक अफ्रीका में एबीसीनिया, मिस्त्र, लाइबीरिया और दक्षिण अफ्रीका को छोड़कर पूरा महाद्वीप यूरोपीय शक्तियों के साम्राज्य का अंग था। इनमें इटली अबीसिनिया को ही प्राप्त करना चाहता था क्योंकि वह 1896 में ई.में एडोवा में हुई हार का प्रतिशोध लेना चाहता था। इसलिए उसने 3 अक्टूबर 1935 को अबीसीनिया पर आक्रमण कर उसे अधिगृहित कर लिया।

10. जर्मनी व इटली के बीच समझौता (1936) :— हिटलर ने इटली के साथ एक सैनिक समझौता (एण्टी कॉमिन्टर्न पैक्ट) करने की इच्छा मुसोलिनी के समक्ष प्रकट की थी किन्तु मुसोलिनी इसके लिए राजी नही हुआ। परिस्थितिवश कुछ समय पश्चात् उसने इसके लिए हामी भर दी क्योंकि इटली व फ्रांस के बीच मतभेद बढ़ता जा रहा था। इटली में फ्रांस में सोकोर्मिका और ट्यूनीशिया के अपने क्षेत्र वापस लेने की मांग की जा रही थी। इसलिए उसने जर्मनी के साथ 22 मई 1939 ई. को एक सैनिक समझौता किया जो कि ''फौलादी समझौता''

कहलाया। इस समझौते में निम्न बातें तय की गई–

पारस्परिक विचार–विमर्श, सामान्य हितों की रक्षा, पारस्परिक राजनीतिक एवं कूटनीतिक समर्थन, सैनिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में सहयोग, एक पक्ष के किसी अन्य देश में युद्ध के अनुरूप कठिनाइयों में फँसने पर पारस्परिक सहयोग किया जाएगा।

इस समझौते से मुसोलिनी को जर्मनी की विशाल सैन्य शक्ति का भी भरोसा मिल गया क्योंकि वह जर्मनी से सैन्य बल में कमजोर था।

नाजीवाद

प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् जर्मनी में हिटलर के नेतृत्व में नाजी दल उभरा और सत्तारूढ़ हुआ। इस दल की विचारधारा को 'नाजीवाद' के नाम से जाना जाता है। फासिज्म की तरह इसे भी 'सर्वाधिकारवाद' या 'सर्वसत्तावाद' के रूप में पहचाना जा सकता है। सरकार द्वारा समस्त मानवीय गतिविधियों का पूर्ण नियन्त्रण अपने हाथ में रखने की अवधारणा 'सर्वसत्तावाद' कहलाती है। राज्य और राज्य के प्रतीक स्वरूप अधिनायक को सर्वोच्च और परम समझकर, उसका अन्य समर्थन व अनुकरण करना तथा अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को तत्पर रहना इसका सारांश है। शासन–सत्ता के समस्त सूत्रों की बागडोर नेता के हाथ में होना, दल में सैनिक अनुशासन और पदक्रम का निर्वहन, अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता पर अंकुश, देशभक्ति और युद्ध का उन्माद पैदा करना तथा आतंक का सहारा लेना इस दल और उसकी विचारधारा की विशेषताएँ कही जा सकती हैं।

नाजीवाद के अभ्युदय के कारण

1. वर्साय संधि द्वारा उपेक्षा :– वर्साय की संधि में जर्मनी को मित्रराष्ट्रों द्वारा वैश्विक धरातल पर तिरस्कार का सामना करना पड़ा। इस सन्धि से पारम्परिक गौरव व स्वाभिमान को ठेस पहुँची थी तथा इस अपमान को वे भुला नहीं पाये। तत्कालीन जर्मनी को एक ऐसे शक्तिशाली नेतृत्व की आवश्यकता थी जो उसके खोये हुये गौरव को पुनः लौटा सके। वर्साय की संधि का जर्मनी में बहुत अधिक दुष्प्रभाव हुआ। जिसके फलस्वरूप जर्मनी का आर्थिक ढ़ाँचा बिखर गया। इस आर्थिक संकट ने वहाँ के लगभग 60 लाख लोगों को बेरोजगार बना दिया और वहाँ भयावह भुखमरी और निर्धनता चारों ओर नजर आने लगी। कृषक भारी कर्ज के नीचे दबने लगे। हिटलर ने इस अवसर का लाभ उठाया और जनता में यह प्रचारित किया कि इन बदतर हालात की जिम्मेदार जर्मनी की तात्कालीन अशक्त प्रजातांत्रिक सरकार है। हिटलर ने वहाँ की जनता का, किसानों का कर्ज माफ करके, बेरोजगार जनता को रोजगार दिलवाने तथा युद्ध हर्जाने पर प्रतिबंध लगाने के लिए आश्वस्त कर दिया। इससे वह जल्द ही जनता के बीच में लोकप्रिय हो गया। जर्मनी की अत्यन्त निराश जनता को हिटलर के नेतृत्व में एक आशा की किरण नजर आने लगी। धीरे–धीरे जनमत का झुकाव हिटलर की ओर होने लगा।

2. वाइमर गणतंत्र की असफलता :– वाइमर गणतंत्र का उदय जर्मनी की दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति में हुआ। आरम्भ में ही इस गणतंत्र को वर्साय संधि पर हस्ताक्षर करने पड़े जिसमें उसने लगभग अपना सबकुछ खो दिया था। जर्मनी के जनतांत्रिक संविधान में अनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली थी। इस कारण वहाँ अनेक दलों का निर्माण हो गया था। जिससे जर्मनी में कुशल सरकार स्थापित नहीं हो सकी इसके कारण जनता में वाइमर गणतंत्र के प्रति असंतोष था। अधिनायकवाद की ओर उसका विश्वास और अधिक प्रबल हो गया। इस स्थिति का लाभ हिटलर को मिला जो कि वहाँ एक अधिनायकवादी शासन की स्थापना करना चाहता था।

3. जनतांत्रिक प्रणाली से मोहभंग :– नाजी दल के अस्तित्व में आने का यह भी एक मुख्य कारण था कि वहाँ कि जनता का जनतान्त्रिक प्रणाली से मोहभंग हो गया था। सरकार जिस प्रकार से कार्य कर रही थी उससे वहाँ की जनता सन्तुष्ट नही थी। इस प्रणाली में उसे अनुशासन का वातावरण दिखाई नहीं देता था। उसे लगने लगा था कि यह सरकार सिर्फ बातें ही कर सकती है काम नहीं कर सकती। इस कारण जर्मनी की जनता इस सरकार से असंतुष्ट थी। जनता को वर्साय संधि के बाद एक ऐसे शासक की आकांक्षा थी जो कि उसे इस दयनीय दशा से मुक्त कर सके। जर्मन जनता को लगने लगा था कि हिटलर उनकी इन अपेक्षाओं को पूरा कर सकता है। इसलिए उसने हिटलर को समर्थन दिया।

4. साम्यवाद का खौफ :– हिटलर को अपने लक्ष्य में साम्यवाद ही सबसे बड़ी रूकावट नजर आ रहा था। साम्यवाद

ने रूस में अपना प्रभाव स्थापित कर लिया था तथा उससे जर्मनी भी अछूता नहीं रहा। हिटलर जानता था कि साम्यवादियों को वहाँ की जनता के समर्थन के द्वारा ही रोका जा सकता है इसलिए उसने साम्यवादियों के विरोध में वहाँ की जनता के मन में डर की भावना को जन्म दिया। उसने उनके समक्ष स्पष्ट किया कि साम्यवाद का अन्तर्राष्ट्रीयवाद जर्मनी के राष्ट्रवाद के लिए सबसे बड़ा खतरा हैं। साम्यवादी शक्तिशाली होकर जर्मनी पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लेंगे। हिटलर की इन सब बातों ने वहाँ की जनता को बहुत अधिक प्रभावित किया।

5. यहूदी विरोधी भावना :– जर्मन जनता यहूदियों के प्रति घृणा की भावना रखती थी। ये यहूदी बड़े–बड़े उद्योग धन्धों व व्यापारियों में अपना प्रमुख स्थान रखते थे। हिटलर ने प्रथम विश्वयुद्ध में जर्मनी की हार का जिम्मेदार भी यहूदियों को ही ठहराया। उसने जर्मन जनता को आश्वासन दिया कि जर्मन जनता पर यहूदियों के ऋणों को वह माफ कर देगा और यहूदियों को देश से बाहर खदेड़ देगा।

6. हिटलर के प्रभावशाली कार्यक्रम :– हिटलर जर्मन जनता के मन में अपने प्रति विश्वास जगा कर ही जर्मनी में नाजीवाद को स्थापित कर सकता था। इसलिए वह वहाँ की जनता की आकाक्षांओं, मनोभावों, विचारों तथा स्थानीय संस्कृति आदि के अनुसार ही कार्य करता था। उसके इन सभी कार्यक्रमों से जनता बहुत अधिक प्रभावित थी। जर्मन जनता के विचारों को उसने सच में बदलने का संकल्प लिया था। वह जनता के इन विचारों को और गहरा करते हुए लोकतंत्र की निंदा करता था। वह शक्ति के शासन को प्रबल बनाता था। वहाँ की जनता वीर नायकों की तरह हिटलर को मानने लगी थी।

7. जर्मन नवयुवकों, सैनिकों तथा राज–कर्मचारियों का साथ :– प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् जर्मनी की दशा इतनी भोचनीय हो गयी थी कि वहाँ के नवयुवकों को रोजगार नहीं मिल रहा था। इसलिए वे हिटलर के नाजीवाद के कार्यक्रम की ओर आकृष्ट हुए। वर्साय संधि में जर्मनी का जो निःशस्त्रीकरण कर दिया गया हिटलर ने उसका विरोध किया। इसलिए वहाँ के सैनिक भी उसका साथ देने के लिए उत्साहित थे। वहाँ के राजकर्मचारी जनतांत्रिक पद्धति से असंतुष्ट थे इसलिए हिटलर को वहाँ के नवयुवकों सैनिकों तथा राज कर्मचारियों का भी समर्थन प्राप्त हुआ।

8. जर्मनी की पारंपरिक राजनीतिक विचारधारा :– जर्मनी के इतिहास का प्रारम्भ राष्ट्रीय नायक से ही हुआ था। वहाँ की जनता अनुशासन प्रिय थी। वहाँ की पारम्परिक राजनीति अधिनायकवादी थी। वह शक्ति के शासन में विश्वास रखती थी। यह सब कुछ जर्मनी की जनता को हिटलर में स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था।

एडोल्फ हिटलर :– हिटलर का जन्म 20 अप्रैल 1889 को आस्ट्रिया के बौनी नामक एक छोटे से गाँव में हुआ था। उसका पिता चुंगी कर्मचारी था। निर्धनता के कारण उसकी उच्च शिक्षा भी नहीं हो सकी निर्धनता के कारण ही उसने पेन्टर का कार्य करके अपना जीविकोपार्जन किया। उसके लिए जर्मन जाति ही श्रेष्ठ थी। वह यहूदियों से बहुत अधिक घृणा करता था। उसे जनतंत्र भी नापसंद था। वह प्रारम्भ से ही शांति में रहने के स्थान पर शौर्य के साथ सेना में जीवन व्यतीत करने को श्रेष्ठतर समझता था। इसलिए उसने प्रथम विश्व युद्ध के प्रारम्भ होते ही सेना में प्रवेश ले लिया।

प्रथम विश्व युद्ध में हिटलर ने वीरता का परिचय दिया। इस कारण उसे सम्मान स्वरूप वीरता पुरस्कार ''आयरन क्रास'' मिला। किन्तु इस युद्ध में जर्मनी की हार ने हिटलर के मन में बहुत अधिक विद्रोह की भावना उत्पन्न कर दी। उसने इस युद्ध में हार का मुख्य कारण साम्यवादियों यहूदियों, समाजवादियों तथा वहाँ की जनतंत्रात्मक पद्धति को ठहराया।

युद्ध के समाप्त हो जाने पर 1918 ई. में वह म्यूनिख आ पहुँचा और वहाँ उसे जासूसी विभाग में नौकरी मिल गयी यहीं जर्मन श्रमिक दल के 6 व्यक्तियों के एक गुप्त दल का उसे पता चला। वह भी 1920 ई. में इस दल का सदस्य बन गया और धीरे–धीरे वह इस दल का नेता बन गया। उसने इस दल के नाम को परिवर्तित करके इसे ''राष्ट्रीय समाजवादी जर्मन श्रमिक दल'' दे दिया। इसे संक्षिप्त रूप में नाजीदल कहा जाता है। इस दल के उत्थान के लिए उसने अपनी पूरी शक्ति लगा दीं उसने ''स्वास्तिक'' को अपने दल का चिन्ह बनाया। वह अपने दल का कार्य पूर्ण रूप से गुप्त रखता था। दल के प्रत्येक सदस्य उसके प्रति समर्पित थे। उसने सन् 1923 में वहाँ की जनतांत्रिक सरकार के विरोध में विद्रोह प्रारम्भ कर दिया था।

इस कारण उसे देशद्रोह के आरोप में 5 वर्ष के लिए जेल की सजा काटने का दण्ड सुनाया गया। किन्तु 8 माह बाद उसे कैदखाने से छोड दिया गया। उसने इस कैद में ही रहकर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ''मीन काम्फ'' लिखी।

नाजीवाद के उत्कर्ष परिणाम :—

1. एकता समझौता:— जर्मनी में हिटलर के अभ्युदय के पश्चात् प्रथम हलचल उसके तीन प्रमुख नजदीकी लघु मैत्री संघ के राष्ट्रों में हुई जो कि चेकोस्लोवाकिया, यूगोस्लाविया, रूमानिया थे। इन देशों ने हिटलर के भय से जेनेवा में निःशस्त्रीकरण सम्मेलन में भाग लेते वक्त ''एकता समझौता'' किया। जिसमें यह निश्चित हुआ कि इन तीनों देशों के विदेश मन्त्रियों की एक परिषद् का गठन किया जाए जिसमें वे अपने हितों को ध्यान में रखते हुए विचार संगोष्ठी कर सके। क्योंकि जर्मनी इन राष्ट्रों के प्रति घृणा का भाव रखता था।

2. हंगरी का सहयोग :— हंगरी का तत्कालीन प्रधानमंत्री गोम्वस भी नाजीवाद के प्रति सहानुभूति रखता था। हंगरी भी वर्साय संधि द्वारा उपेक्षित था और लघु मैत्री संघ के राष्ट्रों से नफरत करता था। इस कारण इन दोनों राष्ट्रों की विचारधारा एक–दूसरे से मिलती–जुलती थी। इसलिए हंगरी जर्मनी एक–दूसरे को अपना मित्र समझने लगे और जर्मनी को यह विश्वास हो गया कि अब यदि विश्व युद्ध हुआ तो उसे हंगरी का सहयोग मिलना संभव है।

3. जर्मनी पोलैण्ड समझौता :— हिटलर के नाजीवाद के जर्मनी में सफल होने के पश्चात् पौलेण्ड को यह भय सताने लगा कि जर्मनी उस पर आक्रमण न कर दे क्योंकि वर्साय की संधि में मित्रराष्ट्रों द्वारा उसे जर्मनी का बहुत अधिक क्षेत्र प्राप्त हुआ था। उसे डर था कि हिटलर पोलिश गलियारे को समाप्त न कर दे। इस कारण उसने जर्मनी से मैत्री करने में ही अपना लाभ समझा। जर्मनी भी अपने आस–पास के राष्ट्रों को मित्र बनाने के लिए तलाश कर रहा था। इस कारण जनवरी 1934 को दोनों देशों में एक समझौते के साथ मित्रता हो गयी।

4. सोवियत रूस में क्रान्तिकारी परिवर्तन :— रूस एक साम्यवादी राष्ट्र था। जर्मनी में साम्यवाद के विरोध में एक ऐसी संस्था अस्तित्व में आयी थी जो कि अधिनायकवादी थी। इस कारण रूस को अपनी असुरक्षा का भय सताने लगा। इस कारण उसने राष्ट्रसंघ की सदस्यता ग्रहण कर ली और अपनी विदेश नीति को सुदृढ़ करते हुए अमेरिका तथा फ्रांस से मित्रता करके चेकोस्लोवाकिया के साथ सुरक्षा संधि स्थापित कर ली।

5. इटली व फ्रांस में मैत्री :— जर्मनी में हिटलर के उत्कर्ष के कारण, फ्रांस को अपनी सुरक्षा का भय सताने लगा। उसने चेकोस्लोवाकिया, इटली व रूस से मित्रता स्थापित कर ली। इनमें इटली व फ्रांस की मित्रता मुख्य थी जो कि लेवाल मुसोलिनी समझौता जनवरी 1935 से प्रारम्भ हुई। इस मैत्री ने चारों और हलचल उत्पन्न कर दी। किन्तु अपने स्वार्थों में अन्तर होने के कारण इन दोनों राष्ट्रों की मैत्री अधिक समय तक अस्तित्व में नहीं रह सकी।

6. ब्रिटेन की तुष्टिकरण की नीति :— हिटलर साम्यवादियों का विरोधी था। इसलिए अमेरिका व ब्रिटेन को इसमें सोवियत रूस के विरूद्ध अपने उद्देश्यों की प्राप्ति प्रतीत हो रही थी। इस कारण उन्होंने जर्मनी के प्रति तुष्टिकरण की नीति अपनाई।

7. यूरोपीय राष्ट्रों में असुरक्षा का भय :— जर्मनी में हिटलर के नाजी दल के उत्कर्ष के साथ ही सम्पूर्ण यूरोप में असुरक्षा का वातावरण स्पष्ट दिखाई देने लगा। छोटे–छोटे राज्य ही नहीं अपितु महाशक्तियाँ भी हिटलर से भयभीत हो गई।

8. द्वितीय महायुद्ध की पृष्ठभूमि का निर्माण :— हिटलर के आक्रामक व्यक्तित्व के कारण लगभग सम्पूर्ण यूरोप भयभीत था और उन्हें आगामी युद्ध का विध्वंस स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होने लगा।

9. पड़ोसी राष्ट्रों में रहने वाली जर्मन जातियों का जर्मनी में एकीकरण :— हिटलर ने ऑस्ट्रिया डेंजिग, स्विट्जरलैण्ड, चैकोस्लोवाकिया और बाल्टिक राज्यों में रहने वाली जर्मन जातियों को दूसरे राष्ट्रों की क्षमता से मुक्त कराकर उनका जर्मनी में एकीकरण कर लिया गया। जबकि वर्साय की सन्धि में जर्मनी को एकीकरण से कई प्रकार से प्रतिबन्धित कर दिया गया था।

10. वर्साय की संधि का अंत व शस्त्रीकरण का आरम्भ :— वर्साय संधि जर्मन जनता के लिए घोर अपमानित करने वाली थी। इसलिए हिटलर ने वर्साय की संधि की सभी शर्तों को रद्द कर दिया और उसने राष्ट्र संघ द्वारा आयोजित निःशस्त्रीकरण

सम्मेलन में जाकर यह स्पष्ट कर दिया कि सभी राष्ट्रों को समानता दी जानी चाहिए। इसलिए उसने 14 अक्टूबर 1933 को निःशस्त्रीकरण का बहिष्कार करके राष्ट्र संघ की सदस्यता से भी इस्तीफा दे दिया और जर्मनी में शस्त्रीकरण की कार्यवाही भुारू कर दी।

11. रोम–बर्लिन–टोकियो धुरी :– हिटलर मुसोलिनी को अपना मित्र बनाना चाहता था और यह संभव भी था क्योंकि जर्मनी व इटली की विचारधाराएं एवं हित समान थे। आरम्भ में दोनों में मित्रता नहीं थी किन्तु अबीसीनिया काण्ड के कारण राष्ट्रसंघ में इटली के विरोध में ब्रिटेन, फ्रांस व रूस आ गये जिसके कारण राष्ट्रसंघ ने इटली पर बहुत से प्रतिबन्ध लगा दिये। इटली ने जर्मनी से मित्रता कर ली हिटलर यहीं आकांक्षा रखता था। इसलिये उसने मुसोलिनी को हर संभव मदद दी और उसने अबीसीनिया युद्ध में इटली को विजयी बनाकर उसके लिए अपने प्रति विश्वास को स्पष्ट कर दिया। इटली से मित्रता करने के उपरांत उसने जापान से मित्रता स्थापित करने का प्रयत्न किया उस समय रूस जर्मनी और जापान दोनों के साम्राज्य के विस्तार में बाधक था। इसिलिए दोनों देशों ने 21 नवम्बर, 1936 को ''एन्टी कॉमिन्टर्न पैक्ट'' पर हस्ताक्षर किये जिसमे दोनों ने रूस के साथ किसी भी प्रकार का राजनीतिक समझौता नहीं करने के लिए आश्वस्त किया और 6 नवम्बर 1937 को इटली ने भी उस पर हस्ताक्षर कर दिये और इस प्रकार रोम–बर्लिन–टोकियों धुरी का निर्माण हुआ।

12. पोलेंड पर आक्रमण और द्वितीय विश्वयुद्ध का आरम्भ :– वर्साय की संधि में जर्मनी का बहुत सा भू–भाग पोलेंड को दे दिया गया था। जर्मनी अपने इस अपमान को भूल नहीं पाया था किन्तु कुछ कारणवश उसे सन् 1934 ई. में पोलेंड के साथ 10 वर्ष तक अनाक्रमण संधि करनी पड़ी थी। फिर भी पोलेंड इस बात से अनभिज्ञ नहीं था कि जर्मनी उस पर आक्रमण करेगा। उनकी यह शंका सत्य में परिणित हो गयी और जर्मनी ने पोलेण्ड पर आक्रमण कर दिया और यही से द्वितीय विश्व युद्ध का आरम्भ हुआ।

द्वितीय विश्व युद्ध

वर्साय की संधि पर विचार करते समय मार्शल फौच ने कहा था कि ''यह शान्ति संधि नहीं, यह तो बीस वर्ष के लिए युद्ध विराम संधि है।'' वास्तव में मार्शल फौच की यह भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई। प्रथम महायुद्ध की समाप्ति सन् 1918–19 में हुई थी और ठीक 20 वर्ष बाद सन् 1939 में द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ हुआ।

इस महाविनाशकारी युद्ध ने मानवता को विनाश के गर्त में ढ़केल दिया। प्रथम महायुद्ध तुलनात्मक रूप से सीमित था, किन्तु द्वितीय विश्व युद्ध ने सम्पूर्ण विश्व को अपने घातक परिणामों से प्रभावित किया। इस विश्वयुद्वने विख्यात वैज्ञानिक आइंसटाइन को यह कहने पर बाध्य कर दिया कि ''तृतीय विश्वयुद्ध के बारे में तो मैं नहीं कह सकता, परन्तु चौथा विश्वयुद्ध पाषाण अस्त्रों से लड़ा जाएगा।''

स्पष्ट हैं कि द्वितीय महायुद्ध की भयंकरता ने राजनीतिज्ञों और वैज्ञानिकों के ह्रदय में यह आशंका पैदा कर दी कि यदि कही तृतीय महायुद्ध हो गया तो सम्पूर्ण मानव सभ्यता ही नष्ट हो जाएगी।

द्वितीय विश्व युद्ध के कारण

प्रथम महायुद्ध 11 नवम्बर 1918 ई. को समाप्त हुआ और ठीक 20 वर्ष बाद सन् 1939 ई. में द्वितीय महायुद्ध प्रारंभ हुआ। प्रथम महायुद्ध के उपरान्त विश्व शान्ति के प्रयत्न ही अप्रत्यक्ष रूप से द्वितीय महायुद्ध के कारण बन गए। राष्ट्रसंघ अन्तर्राष्ट्रीय शांति के प्रयास में असफल रहा और राष्ट्रों द्वारा उसके लक्ष्यों की अवमानना की गई। यूरोप के सभी छोटे बड़े साम्राज्यवादी राष्ट्र जैसे इंग्लैण्ड, इटली, जर्मनी, रूस, पौलेण्ड इत्यादि अन्तर्राष्ट्रीय न्याय तथा सन्धि की शर्तों के विपरीत शस्त्रीकरण की विनाशकारी होड़ में लग गए।

इन परिस्थितियों का स्वाभाविक परिणाम यह महाविनाशकारी युद्ध था जिसने मानवता को विनाश के गर्त में ढकेल दिया। इसके प्रमुख कारण निम्नांकित है–

1. वर्साय संधि की कठोर व अपमानजनक शर्ते :– ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि द्वितीय विश्व युद्ध के कारणों के बीज पेरिस में हुई सन्धियों में थे। प्रथम विश्व युद्ध में जर्मनी की पराजय हुई। उसे वर्साय की अपमानजनक सन्धि पर हस्ताक्षर करने पड़े। संधि को लेकर

जर्मन के प्रतिनिधियों व जनता में भारी असंतोष था। इस संधि ने जर्मनी को राजनीतिक, आर्थिक व सैनिक रूप से पंगु बना दिया। उसे उपनिवेशों से वंचित किया एवं उसके व्यापार तथा वाणिज्य को बड़ी हानि पहुंचायी।

लैंगसम ने लिखा है – ''इससे यूरोप में जर्मन प्रदेश का आठवां भाग और 70 लाख व्यक्ति कम हो गये, उसके सारे उपनिवेश, 15% कृषि योग्य भूमि, 12% पशु, 10% कारखाने छीन लिए गए, उसके व्यापारिक जहाज 57 लाख टन से घटाकर केवल 5 लाख टन तक सीमित कर दिये गये। ब्रिटेन की नौ–सैनिक शक्ति से प्रतिस्पर्धा करने वाली उसकी नौ–सैनिक शक्ति को नष्ट कर दिया गया और स्थल सेना की संख्या एक लाख निश्चित कर दी गयी। उसे अपने कोयले के 2/3 भाग से, लोहे के 2/3 भाग से, और जस्ते के 7/10 भाग से तथा आधे से भी अधिक सीसे के क्षेत्र से हाथ धोना पड़ा। उपनिवेशों के इस प्रकार छीन लिये जाने से उसे रबड़ और तेल की कमी का सामना करना पड़ा। वर्साय की प्रादेशिक व्यवस्थाओं में उसके उद्योग–धन्धों और व्यापार को एकदम चौपट कर दिया। इसी प्रकार क्षतिपूर्ति के नाम पर उसे खाली चैक पर हस्ताक्षर करने को बाध्य किया गया।

जर्मनी जैसा स्वाभिमानी राष्ट्र ऐसी दमनात्मक व अपमान की शर्तों को दीर्घकाल तक बर्दाश्त नहीं कर सकता था। अवसर मिलते ही अपमान का प्रतिशोध लेने के लिए जर्मनी ने पुनः मित्र राष्ट्रों के विरूद्ध हथियार उठा लिये।

2. अधिनायकवाद का उदय :– इस समय कई देशों में अधिनायकवादी शक्तियों का उदय हुआ जिनके कार्यों और उग्र नीति ने द्वितीय विश्व युद्ध को अनिवार्य बना दिया। जर्मनी में वाइमर गणराज्य कमजोर साबित हुआ। वर्साय की संधि पर हस्ताक्षर से जनता में असंतोष पनपने लगा। जनता के असंतोष व राष्ट्रीय भावना का लाभ उठाकर हिटलर सत्ता तक पहुँच गया। उसने आक्रामक विदेश नीति का अनुसरण किया।

इटली में मुसोलिनी ने लोकतांत्रिक व्यवस्था का अंत कर अधिनायकवादी सत्ता स्थापित कर दी। जापान में भी तानाशाही एवं साम्राज्यवादी भावना उत्पन्न हो चुकी थी। जापान, इटली व जर्मनी तीनों ने मिलकर 6 नवम्बर 1937ई. को रोम–बर्लिन–टोक्यो धुरी का निर्माण किया। इस प्रकार अधिनायकवाद के उदय ने विश्व को युद्ध के बहुत पास ला दिया।

3. राष्ट्रसंघ की निर्बलता :– छोटे राज्यों के झगड़ों को निपटाने में तो राष्ट्रसंघ सफल रहा, परन्तु बड़े राष्ट्रों के मामलों में राष्ट्रसंघ कुछ न कर सका। इससे छोटे राष्ट्रों का विश्वास खत्म हो गया और उन्होंने अपनी सुरक्षा के लिए प्रमुख शक्तियों के साथ सैनिक संधियाँ करना शुरू कर दिया। परिणामस्वरूप संसार पुनः दो सशस्त्र गुटों में विभाजित हो गया जिससे अन्तर्राष्ट्रीय तनाव बढ़ता ही गया और जिसकी परिणति द्वितीय विश्वयुद्ध में हुई। शूमेन ने उचित ही कहा है – ''संघ की सफलता के लिए यह आवश्यक था कि सदस्य राज्यों में इसके सिद्धान्तों के प्रति निष्ठा, बुद्धिमत्ता और साहस होता किन्तु इनमें इसका सर्वथा अभाव था। अतएव जेनेवा की झील के तट पर एरियानान पार्क में निर्मित उसका भव्य प्रासाद शीघ्र की उसका सुन्दर समाधि स्थल बन गया।''

4. साम्राज्यवादी भावना :– एशिया में जापान अपने साम्राज्य का विस्तार करना चाहता था। 1930 तक जापान की शक्ति में बहुत वृद्धि हुई और 1931ई. में उसने मंचूरिया पर चढ़ाई की। जुलाई 1937ई. में उसने युद्ध की घोषणा किये बिना चीन के साथ युद्ध शुरू कर दिया।

यूरोप में हिटलर जर्मनी से प्रथम विश्व युद्ध के बाद छीने गये उपनिवेशों को न केवल वापस लेना चाहता था, अपितु अपने देश में ऐसे अनेक देश सम्मिलित करना चाहता था जिससे जर्मनी का साम्राज्य ग्रेट ब्रिटेन और फ्रांस जैसा हो जाये। इसी प्रकार मुसोलिनी भी इटली को एक महान साम्राज्य बनाने की योजनाएँ बनाने में लगा हुआ था।

5. निःशस्त्रीकरण की असफलता :– पेरिस सम्मेलन में सभी देशों के प्रतिनिधियों ने निश्चित किया था कि भविष्य में युद्ध की आशंका को दूर करने का सबसे अच्छा उपाय निःशस्त्रीकरण है। यह प्रस्ताव पराजित राष्ट्रों पर कठोर रूप से लागू किया गया, परन्तु विजयी देशों ने निःशस्त्रीकरण की ओर ध्यान नहीं दिया। 1932ई. में राष्ट्रसंघ के तत्वाधान में जेनेवा में निःशस्त्रीकरण सम्मेलन आरम्भ हुआ। संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियत रूस तथा अन्य अनेक राष्ट्रों ने इसमें भाग लिया किन्तु पारस्परिक अविश्वास, घृणा एवं स्वार्थ के कारण निःशस्त्रीकरण

के किसी पहलू पर कोई सन्धि न हो सकी।

मार्च 1935ई. में हिटलर ने खुले तौर पर पुनशस्त्रीकरण की घोषणा की। इस घोषणा ने यूरोप में घबराहट उत्पन्न कर दी। जर्मनी के पुनशस्त्रीकरण से उत्पन्न संकट का सामना करने के लिए सोवियत रूस तथा फ्रांस ने पारस्परिक रक्षात्मक सन्धि पर हस्ताक्षर किये। इस प्रकार जर्मनी एवं फ्रांस पुनर्शस्त्रीकरण में जुट गये। पुनर्शस्त्रीकरण के कारण यूरोप तीव्र गति से भयंकर विस्फोट की ओर अग्रसर हुआ जिसकी अन्तिम परिणति द्वितीय विश्व युद्ध में हुई।

6. उग्र राष्ट्रवाद :– प्रथम विश्व युद्ध की भांति दूसरे विश्व युद्ध में भी उग्र राष्ट्रवाद संघर्ष का महत्वपूर्ण कारण था। औद्योगिक क्रांति ने प्रतिस्पर्धा बढ़ाकर आर्थिक राष्ट्रवाद की भावना विकसित की। आर्थिक मंदी ने भी राष्ट्रवाद की भावना को उत्तेजित किया और मित्र राष्ट्रों ने भी अपने राष्ट्रहित को ध्यान में रखकर नीति अपनाई।

अब यह 'मेरा देश', 'मेरी भाषा', 'मेरी संस्कृति' ही सर्वश्रेष्ठ है, बाकी सभी गौण है, समझने लग गये। हिटलर का कथन था कि ''जर्मन शुद्ध आर्य नस्ल के हैं, वे जहाँ कहीं भी रहते हैं, वे प्रदेश उनके है, वे संसार के सर्वश्रेष्ठ लोग हैं, अतः हर दृष्टि से उन्हें अधिकार है कि वे सब लोगों पर शासन करे। इस तरह के उग्र राष्ट्रवाद ने मानव जाति को एक बार फिर विनाश की ओर धकेल दिया।

7. तुष्टीकरण की नीति :– प्रथम विश्व युद्ध के बाद ब्रिटेन और फ्रांस की विदेश नीति में बदलाव होने लगे। ब्रिटेन शक्ति संतुलन की नीति में विश्वास करने लगा। वह नहीं चाहता था कि फ्रांस एक शक्तिशाली देश बन जाये क्योंकि इससे यूरोप का शक्ति संतुलन बिगड़ने का भय था। ब्रिटेन साम्यवाद के बढ़ते प्रभाव से चिन्तित था। इसलिये उसने जर्मनी के प्रति तुष्टीकरण की नीति अपनायी ताकि आवश्यकता पड़ने पर शक्तिशाली जर्मनी, साम्यवादी रूस का मुकाबला कर सके। अतः ब्रिटेन ने जर्मनी के साथ हमेशा तुष्टीकरण की नीति का अनुसरण किया।

1938 में आस्ट्रिया के अपहरण चेकोस्लोवाकिया के अंग भंग, राइनलैण्ड में सैन्यकरण आदि व्यवस्थाओं के उल्लंघन के विरूद्ध तुष्टिकरण की नीति अपनाते हुए कोई कदम नहीं उठाया।

इससे मित्र राष्ट्रों का मोर्चा कमजोर पड़ता गया व तानाशाहों का आत्मविश्वास बढ़ता गया। शूमां के शब्दों में ''तुष्टीकरण आरम्भ से ही एक आत्मघाती मूर्खता के अतिरिक्त और कुछ नहीं थी।''

8. अल्पसंख्यक जातियों का असन्तोष :– वर्साय की सन्धि और उसके साथ ही बाद में होने वाली अन्य सन्धियों के द्वारा विभिन्न अल्पसंख्यक जातियाँ अस्तित्व में आयी। पेरिस शान्ति संधियों के बाद कई अल्पसंख्यक जातियां विदेशी शासन के अन्तर्गत रह गयीं, जिसके कारण उनमें असन्तोष और भय की भावना उत्पन्न हो गयी।

हिटलर ने इस असन्तोष का लाभ उठाया। उसने पश्चिमी शक्तियों से सौदेबाजी की और ''अल्पसंख्यकों पर कुशासन'' के बहाने से आस्ट्रिया तथा सुडेटनलैण्ड प्रदेश पर कब्जा कर लिया और पोलेण्ड पर भी आक्रमण कर दिया। जिससे द्वितीय विश्व युद्ध की शुरूआत हो गयी।

9. अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संकट :– सन् 1929 ई. में विश्व में एक महान् आर्थिक संकट आया, जिसका प्रत्येक देश की आर्थिक व्यवस्था पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से बुरा प्रभाव पड़ा। इस आर्थिक संकट के परिणामस्वरूप राष्ट्रों में निःशस्त्रीकरण की भावना समाप्त हो गयी और वे शस्त्रों की होड़ में लग गये। जर्मनी में घोर आर्थिक संकट छा गया, जिसके कारण लगभग 7 लाख व्यक्ति बेकार हो गये। इस आर्थिक संकट ने जर्मनी में नाजीवाद के उत्कर्ष में सहायता प्रदान की। इस आर्थिक संकट का लाभ उठाकर ही जापान ने सन् 1931 में मंचूरिया पर चढ़ाई कर दी और सन् 1935ई. में अबीसीनिया पर इटली का हमला भी इसी आर्थिक संकट का एक अप्रत्यक्ष परिणाम था।

10. विश्व का दो गुटों में विभाजन :– जिस प्रकार प्रथम विश्व युद्ध से पहले समूचा विश्व दो विरोधी सैनिक गुटों में विभाजित हो गया। उसी प्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व भी सम्पूर्ण विश्व दो परस्पर शत्रु सैनिक गुटों में बँट गया। एक तरफ जर्मनी, इटली और जापान जैसे कभी सन्तुष्ट न होने वाले राष्ट्रों की 'रोम बर्लिन टोक्यो' धुरी थी तो दूसरी तरफ ब्रिटेन फ्रांस, सोवियत संघ और अमरीका जैसे मित्र राष्ट्रों ने मिलकर एक सुदृढ़ संगठन स्थापित कर लिया। जब हिटलर के नेतृत्व में

जर्मन सेना ने पोलेण्ड पर आक्रमण किया तो ब्रिटेन और फ्रांस ने पोलेण्ड को समर्थन दिया और द्वितीय महायुद्ध भड़क उठा।

11. युद्ध का तात्कालिक कारण :– उपर्युक्त कारणों से अन्तर्राष्ट्रीय रंगमंच पर बारूद का महल खड़ा हो चुका था। अब एक चिनगारी लगाने की देर थी। यह कार्य हिटलर ने पोलेण्ड पर आक्रमण करके सम्पन्न किया। 1 सितम्बर 1939 ई. को हिटलर ने पोलेण्ड पर अचानक आक्रमण कर दिया। 3 सितम्बर को ब्रिटेन व फ्रांस द्वारा चेतावनी देने पर भी युद्ध बंद नहीं किया तो ब्रिटेन व फ्रांस ने भी जर्मनी के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।

द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रभाव एवं परिणाम

द्वितीय विश्वयुद्ध लगभग 6 वर्ष तक चला। यह मानव इतिहास का सर्वाधिक क्रूर, भयानक और विनाशकारी युद्ध था। इसका विश्व के राजनैतिक एवं भौगोलिक परिवेश पर व्यापक प्रभाव पड़ा।

1. परमाणु युग का सूत्रपात :–संयुक्त राज्य अमेरिका के एक वायुयान बी–29 ने 6 अगस्त 1945 ई. को हिरोशिमा पर एक अणुबम गिराया। जिससे 90 प्रतिशत इमारतें नष्ट हो गई एवं लगभग 7, 50, 000 व्यक्ति मारे गये। 9 अगस्त 1945 ई. को नागासाकी पर अणु बम गिराए गए। इस महा संहार के साथ ही परमाणुयुग का सूत्रपात हुआ। इस युग से मानव सभ्यता पर विनाश की काली घटा छा गई। वैज्ञानिक उन्नति ने इसे और भयावह बना दिया लेकिन इसी भय ने विश्व के विभिन्न देशों को एक दूसरे के नजदीक खड़ा कर शांति की राह खोजने पर मजबूर कर दिया।

2. दो विचार धाराओं में विभाजित विश्व :– दूसरे विश्व युद्ध के बाद उग्र राष्ट्रवाद के स्थान पर नई विचार धाराओं ने स्थान ले लिया, जो समाज को नए रूप में संगठित करना चाहती थी। जिससे विश्व समाज दो प्रमुख विचार धाराओं में विभाजित हो गय। प्रथम साम्यवाद या कम्युनिज्म दूसरा लोकतंत्रवाद या डेमोक्रेसी। साम्यवादी विचार धारा उत्पादन के साधनों पर समाज का अधिकार व वर्गविहीन समाज की बात करती है तो दूसरी तरफ लोकतंत्र विचारधारा उत्पादन, विनिमय और वितरण पर राज्य द्वारा नियंत्रण व पूँजीपति, मजदूर, जमींदार और किसान में समुचित समन्वय की बात करती है। इस प्रकार समाज व राष्ट्र दो पृथक वर्गों में विभाजित हो गया। राष्ट्रभक्ति का स्थान विचारधारा भक्ति ने ले लिया।

3. जर्मनी का दो भागों में विभाजन :– द्वितीय विश्व युद्ध के लिये जर्मनी को सर्वाधिक जिम्मेदार माना गया था। अतः मित्र राष्ट्रों ने जर्मनी को शक्तिहीन करने की दृष्टि से उसे पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी में विभाजित कर दिया। बर्लिन के मध्य दीवार खड़ी कर दी। फ्रांस, ब्रिटेन और अमेरिका द्वारा अधिकृत पश्चिमी जर्मनी के क्षेत्रों का एकीकरण करके 21 सितम्बर 1949ई. जर्मन संघीय गणतंत्र की स्थापना की। पूर्वी जर्मनी का क्षेत्र जो रूसी प्रभाव में था 7 अक्टूबर 1949ई. को जर्मनी प्रजातंत्रात्मक गणराज्य की स्थापना की गयी। इसमें राजधानी बर्लिन एवं क्षेत्रफल 42000 वर्ग मील था। पश्चिमी जर्मनी में पूँजीवादी व पूर्वी जर्मनी में साम्यवादी अर्थव्यवस्था थी। सोवियत संघ के विघटन के बाद 1990ई. में पूर्वी व पश्चिमी जर्मनी का पुनः एकीकरण हो गया।

4. राष्ट्रीय भावना की निर्बलता :– वैज्ञानिक प्रगति द्वारा मनुष्य ने देश और काल पर अद्भुत विजय प्राप्त की ली थी। भाषा, नस्ल, धर्म व संस्कृति भेद व उसका महत्त्व कम हो गया था। अब राष्ट्र भावना के स्थान पर राष्ट्रहित के लिए विश्व स्तर पर संगठित होकर आगे बढ़ने की भावना विकसित होने लगी। यही कारण है कि समान विचारधारा वाले राष्ट्र विभिन्न संगठन बनाकर विकास व उन्नति की राह खोजने लगे।

5. सर्वसत्तावादी शासन की स्थापना पर बल :– युद्ध ने प्रजातंत्रीय विजेता राज्यों को निर्बल व खोखला साबित कर दिया था। ये राष्ट्र भी युद्ध के बाद आर्थिक संकट से अपने को नहीं बचा सके थे। विभिन्न विचार धाराओं के कारण ऐसी राजनीतिक पार्टियॉ स्थापित हो गईं थी जो राष्ट्र से अधिक विचार धारा को महत्व देती थी। फलतः लोकतांत्रिक व्यवस्था के उपरान्त भी जनता की शक्तियों पर नियंत्रण व राज्य के हित में कार्यवाही की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। इस आवश्यकता ने सच्चे लोक शासन का लोप कर सर्व सत्तावादी शासन की स्थापना आरम्भ कर दी।

6. यूरोपीय प्रभुत्व का अंत :– द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व यूरोप विश्व इतिहास का निर्माता था। किन्तु युद्ध के बाद विश्व समाज को अनुशासित करने वाला यूरोप अब ''समस्या प्रधान'' यूरोप बन गया। जर्मनी पंगु हो चुका था। इटली सर्वनाश के

कगार पर खड़ा था, ब्रिटेन व फ्रांस की स्थिति तृतीय श्रेणी के राष्ट्रों जैसी हो गई थी। आर्थिक दृष्टि से पंगु इन देशों में लोग बेघर व बेरोजगार हो गए थे। परिणामस्वरूप विश्व का नेतृत्व दो महाशक्तियों—संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत रूस के हाथ में चला गया। विश्व के छोटे बड़े राष्ट्र इन महाशक्यिों के क्षेत्राधिकार में संगठित हो गए। विश्व का राजनैतिक नेतृत्व इन दोनों महाशक्तियों के हाथों में चला गया। सोवियत रूस—साम्यवादी व्यवस्था का तथा अमेरिका पूंजीवादी व लोकतांत्रिक व्यवस्था का पोषण करने लगा।

7. शीतयुद्ध का आरम्भ :— द्वितीय विश्व युद्ध के बाद दो महाशक्ति के रूप में अमेरिका व सोवियत रूस का उदय हुआ। विश्व दो खेमों में विभक्त हो गया। दोनों गुट अपना अपना प्रभुत्व स्थापित करने में जुट गए, जिससे दोनों के बीच मतभेद उत्पन्न हो गए। दोनों महा शक्तियाँ परस्पर विरोधी विचार धारा से संबंधित होने के कारण तनाव व वैमनस्य का वातावरण धीरे—धीरे बनने लगा। एक दूसरे पर आरोप, प्रत्यारोप व विरोधी राजनैतिक प्रचार करने से शीतयुद्ध आरम्भ हो गया। यह एक प्रकार का अप्रत्यक्ष युद्ध ही था जिससे परस्पर शत्रुतापूर्ण व्यवहार बना रहा।

8. गुट निरपेक्षता :— विश्व युद्ध के उपरान्त जन्मे नए सम्प्रभु राष्ट्रों ने अपने को शीतयुद्ध की खींचतान से अलग रखने का निर्णय लिया। भारत ने मार्ग दर्शन करते हुए गुट निरपेक्षता की आवाज बुलन्द की, गुलामी की जंजीरों से मुक्त राज्यों को (अफ्रीकी—एशियाई) संगठित होकर अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति बनने का आह्वान किया। गुट निरपेक्षता का प्रमुख ध्येय महा शक्तियों से समान दूरी बनाए रखते हुए अपने विकास में उनसे सहयोग प्राप्त करना, परस्पर सहयोग करके अपने को विकासशील राष्ट्रों की श्रेणी में लाना, अभी तक परतंत्र राज्यों के स्वाधीनता में सहयोग करना व उपनिवेशवाद के विरूद्ध लड़ने के लिए एक मंच तैयार करना था।

9. एशिया एवं अफ्रीका का जागरण एवं नये स्वतंत्र राज्यों का उदय :— विश्व युद्ध के बाद यूरोपीय उपनिवेशों में राष्ट्रीयता की भावना प्रज्वलित हुई। इस जागरण ने यूरोपीय राष्ट्रों के प्रभाव को समाप्त कर दिया। अपनी परिस्थितियों से विवश होकर ब्रिटिश सरकार ने अपनी नीतियों में परिवर्तन किया जिससे भारत, वर्मा, मलाया, श्रीलंका, मिश्र आदि विविध देश ब्रिटिश आधिपत्य से मुक्त हो गए। फ्रांसीसी आधिपत्य से भी अनेक देशों को स्वतंत्रता प्राप्त हुई। कम्बोडिया, लाओस, वियतनाम आदि देश स्वतंत्र हो गए। हालैण्ड के उपनिवेशों—जावा, सुमात्रा, बोर्नियो आदि ने हिन्देशिया नामक संघ राज्य की स्थापना की और स्वतंत्र हो गए। इस प्रकार धीरे धीरे औपनिवेशिक साम्राज्य का सूर्यास्त हो गया।

10. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना :— द्वितीय विश्व युद्ध के भीषण ताण्डव ने विचारशील राजनीतिज्ञों को मानव जाति की रक्षा के लिए शांति को सुरक्षित रखने वाले एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के निर्माण की तीव्र आवश्यकता महसूस हुई। युद्ध काल में ही इसकी स्थापना के प्रयास आरम्भ हो चुके थे। अप्रेल—जून 1945ई. में सेन—फ्रांसिस्को सम्मेलन में इसको अन्तिम रूप दिया गया। 24 अक्टूबर 1945ई. को संयुक्त राष्ट्र संघ के विधान को लागू किया गया। सेन फ्रांसिस्को सम्मेलन में 51 सदस्यों ने हस्ताक्षर किए जो संस्थापक सदस्य कहलाये। वर्तमान में 193 सदस्य है।

निष्कर्ष :— द्वितीय विश्व युद्ध अति भयंकर एवं विनाशकारी था। इसके प्रभाव से कोई भी राष्ट्र अछूता नहीं रहा। राष्ट्रवाद का अन्त हो गया। विश्व वैज्ञानिक व विकास की सोच के साथ आगे बढ़ा। शक्ति का केन्द्र यूरोप से हस्तान्तरित हो गया। आर्थिक विकास प्रमुख ध्येय बन गया। संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना शांति, सुरक्षा व विकास के लिए सबसे बड़ी देन है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना

कोई भी अन्तर्राश्ट्रीय संस्था तब तक सुचारू रूप से कार्य नहीं कर सकती जब तक उसके सदस्य विशेषकर महान शक्तियाँ सहयोग से कार्य न करें तथा व्यक्तिगत रूप से रूकावट उत्पन्न न करें। यह विचित्र बात है कि मानव समाज के आचरण में युद्ध एवं शांति, विध्वंस तथा निर्माण के बीज साथ—साथ निहित हैं। नेपोलियन के युद्धों के बाद होली एलायंस, प्रथम विश्व युद्ध के बाद राष्ट्रसंघ तथा द्वितीय विश्व युद्ध के बाद 'संयुक्त राष्ट्र संघ' की स्थापना इसके प्रमाण हैं।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद अन्तर्राष्ट्रीय शांति की स्थापना के लिए राष्ट्रसंघ अस्तित्व में आया जो विभिन्न दुर्बलताओं और महाशक्तियों के असहयोग के कारण अपने उद्देश्य में असफल हुआ। 3 सितम्बर 1939ई. में द्वितीय

विश्वयुद्ध छिड़ गया जो आपार धन–जन के विनाश के बाद सन् 1945ई. में समाप्त हुआ।

द्वितीय विश्व युद्ध का विस्फोट होते ही मित्र राष्ट्रों ने एक नवीन अंतर्राष्ट्रीय संगठन की स्थापना के लिए विश्व के प्रमुख राजनीतिज्ञों की सम्मेलन वार्तायें प्रारम्भ की। वे इस प्रकार हैं –

अटलांटिक चार्टर :– 14 अगस्त 1941ई. को ब्रिटेन के प्रधानमंत्री चर्चिल व अमरीकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने संयुक्त घोषणा की। यह घोषणा अटलाण्टिक महासागर में एक युद्ध पोत पर की गई थी अतः इसे अटलाण्टिक घोषणा कहा गया। इसमें कहा गया कि ''हम साम्राज्यवादी भावना नहीं रखते है। हम चाहते हैं कि प्रत्येक राष्ट्र का शासन जनमत के आधार पर ही चले, सब राष्ट्रों में पारस्परिक आर्थिक सहयोग हो, युद्ध के बाद पराजित राष्ट्र पुनः प्रतिष्ठित हों और उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हो तथा प्रत्येक राष्ट्र युद्ध सामग्री में कमी करे और अन्तर्राष्ट्रीय शांति के लिए प्रयत्न करे।'' इस अटलाण्टिक घोषणा को ही संयुक्त राष्ट्रसंघ का जन्मदाता माना जाता है। अटलाण्टिक घोषणा पर 26 राष्ट्रों ने जनवरी 1942 में हस्ताक्षर किए और सोवियत रूस के हस्ताक्षर करते ही इस संगठन के अस्तित्व में जान आ गई।

सैन फ्रांसिस्को सम्मेलन, 1945ई. :– संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर को अंतिम रूप देने के लिए अमेरिका के सैन–फ्रांसिस्कों में एक सम्मेलन आयोजित हुआ। इसमें चार्टर को सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया। चार्टर के अनुच्छेद 110 में यह कहा गया था कि सोवियत रूस, फ्रांस, इंग्लैण्ड, अमेरिका, चीन तथा शेष राज्यों की अधिकांश राज्यों की सरकारों द्वारा स्वीकृति प्रदान करने पर चार्टर लागू माना जायेगा। इसमें 51 राष्ट्रों के 850 प्रतिनिधि एकत्रित हुए थे। 26 जून 1945ई. को चार्टर पर 50 राष्ट्रों ने हस्ताक्षर किए। बाद में पोलैण्ड राष्ट्र के प्रतिनिधि ने हस्ताक्षर किए। अनेक हस्ताक्षरकर्ता राष्ट्रों द्वारा इस हेतु अपनी संसद से स्वीकृति लेने की प्रक्रिया 24 अक्टूबर 1945ई. तक पूरी कर ली थी। 24 अक्टूबर 1945ई. को संयुक्त राष्ट्र संघ का चार्टर लागू हुआ। अतः 24 अक्टूबर को प्रतिवर्ष संयुक्त राष्ट्र संघ दिवस मनाया जाता है। 10 फरवरी 1946ई. को लंदन के वेस्टमिन्सटर हाल में संघ की प्रथम बैठक हुई।

संयुक्त राष्ट्र संघ का चार्टर :– संयुक्त राष्ट्र संघ के विधान को ही चार्टर कहा जाता है। चार्टर में 10,000 शब्द, 19 अध्याय व 111 धारायें हैं। इसमें संघ के उद्देश्यों, सिद्धान्तों व नियमों का उल्लेख है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य :– संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में उसके उद्देश्यों का वर्णन इस प्रकार किया गया है। ''अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा स्थापित करना, राष्ट्रों के बीच जन–समुदाय के लिए समान अधिकारों तथा आत्मनिर्णय के सिद्धान्त पर आधारित मित्रतापूर्ण सम्बन्धों का विकास करना, आर्थिक, सामाजिक अथवा मानव जाति के लिए प्रेम आदि अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करना तथा उन सामान्य उद्देश्यों की पूर्ति के लिये राष्ट्रों के कार्यों को समन्वित करने के उद्देश्य से एक केन्द्र का कार्य करना।

चार्टर के अनुसार संयुक्त राष्ट्र संघ के चार प्रमुख उद्देश्य हैं–

1. सामूहिक व्यवस्था द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा कायम रखना और आक्रामक प्रवृत्तियों को नियंत्रण में रखना।
2. अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का शांतिपूर्ण समाधान करना।
3. राष्ट्रों के आत्मनिर्णय और उपनिवेशवाद विघटन की प्रक्रिया को गति देना।
4. सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय क्षेत्रों में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को प्रोत्साहित करना।
5. संघ ने इन उद्देश्यों से जुड़े हुए दो और लक्ष्य भी निर्धारित किए हैं। वे हैं – निःशस्त्रीकरण और नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की स्थापना।

संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धांत :– संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अनुसार निम्नांकित सिद्धांत बनाए गये है–

1. संयुक्त राष्ट्र संघ का गठन सभी सदस्य देशों की समान सम्प्रभुता के आधार पर किया गया है।
2. सभी सदस्य देशों से उन पर लागू होने वाले दायित्वों का पालन पूरी ईमानदारी से किए जाने की आशा की जाती है।

3. अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का निपटारा शान्तिपूर्ण साधनों से करना।

4. सदस्य राष्ट्र चार्टर के प्रतिकूल कार्य करने वाले राष्ट्र की सहायता नहीं करेगा।

5. संयुक्त राष्ट्र संघ अपने सदस्य न बने राष्ट्रों से भी अन्तर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा बनाए रखने वाले सिद्धान्तों की पालना करवाने की व्यवस्था करेगा।

6. संयुक्त राष्ट्र संघ किसी भी राष्ट्र के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा।

7. अपने अन्तर्राश्ट्रीय सम्बन्धों में अन्य राज्यों के विरूद्ध धमकी या बल प्रयोग से विरत रहेगा।

संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता :– संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अनु. 4 में सदस्यता ग्रहण करने के लिए मुख्य शर्ते इस प्रकार है–

1. संयुक्त राष्ट्र संघ में वह देश सदस्यता ग्रहण कर सकता है, जो शांति प्रिय हो।

2. चार्टर के उत्तरदायित्व को स्वीकार करने और उसको पूरा करने के योग्य एवं इच्छुक हो।

3. सदस्य राष्ट्र किसी भी प्रकार का प्रभाव संयुक्त राष्ट्र संघ के कर्मचारी पर नहीं डालेगा।

उपरोक्त शर्तों को मानने वाला विश्व का कोई भी देश संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता ग्रहण कर सकता है। परन्तु उस राष्ट्र को सदस्यता तब दी जायेगी, जब उसे सुरक्षा परिषद की संस्तुति के बाद महासभा दो–तिहाई बहुमत से अनुमोदन कर दे। संयुक्त राष्ट्र संघ की वर्तमान सदस्य संख्या 193 है। अंतिम सदस्य द. सूडान है।

सदस्यों का निलंबन :– चार्टर की धारा 5 एवं 6 के अनुसार संघ के किसी भी सदस्य को चार्टर की निरंतर उल्लंघन करने पर सुरक्षा परिषद् की सिफारिश पर महासभा द्वारा सदस्यता से वंचित किया जा सकता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता के प्रत्याहार के सम्बन्ध में चार्टर मौन है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक मुहर :– संयुक्त राष्ट्र संघ की मुहर में विश्व का नक्शा जैतून की टहनियों से घिरा हुआ दर्शाया गया है। महासभा ने इसकी डिजाइन 1946 ई. में स्वीकृत की थी।

संयुक्त राष्ट्र संघ का ध्वज :– संयुक्त राष्ट्र संघ के ध्वज की पृष्ठभूमि श्वेत रंग की है। इसमें ऊपर की ओर खुली हुई जैतून की दो शाखाएँ और हल्की नीली पृष्ठभूमि के साथ बीच में विश्व का मानचित्र है। अक्टूबर 1947 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने ध्वज को अंगीकृत किया।

भाषायें :– संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकृत भाषायें – अंग्रेजी, फ्रेंच, चीनी, अरबी, रूसी तथा स्पेनिश है। कार्य करने की भाषायें दो ही है – अंग्रेजी तथा फ्रैंच।

मुख्यालय :– संयुक्त राष्ट्रसंघ का मुख्यालय अमरीका के न्यूयॉर्क शहर के मैनहेटन द्वीप में बना है। इसका भवन 17 एकड़ जमीन पर 39 मंजिल का है। वर्तमान में लगभग 10,000 कर्मचारी इसमें कार्यरत है। इस भवन में संघ के महासचिव का मुख्यालय भी है।

महासचिव :– महासचिव संयुक्त राष्ट्र संघ का मुख्य प्रशासनिक अधिकारी होता है। जिसकी नियुक्ति सुरक्षा परिषद् की संस्तुति पर महासभा द्वारा की जाती है। महासचिव के प्रत्याशी के बारे में सुरक्षा परिषद के पांच स्थायी सदस्यों की सकारात्मक सहमति आवश्यक है। इसका कार्यकाल 5 वर्ष का होता है। महासचिव के निम्न कार्य है :–

1. **सामान्य प्रशासन :–** महासचिव संयुक्त राष्ट्र संघ का सर्वोच्च अधिकारी होता है और इस कारण वह संस्था की सभी बैठकों में भाग लेता है। वह संस्था के कार्यों की वार्षिक रिपोर्ट महासभा को देता है।

2. **तकनीकी कार्य :–** वह ऐसे कार्य भी करता है जो महासभा सुरक्षा परिषद आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् तथा न्यास धारिता परिषद द्वारा सौंपे जाते है।

3. **सचिवालय का प्रशासन :–** सचिवालय का पूर्ण उत्तरदायित्व महासचिव का होता है। वह प्रशासन से संबंधित कार्य करता है जैसे कर्मचारियों की नियुक्ति करना।

4. **वित्तीय कार्य :–** संयुक्त राष्ट्र संघ का बजट तैयार

करवाता है। सदस्य राष्ट्रों से अनुदान एकत्र करता है एवं व्यय पर नियंत्रण रखता है।

5. **राजनैतिक कार्य :–** महासचिव सुरक्षा परिषद का ध्यान किसी ऐसे विषय पर आकर्षित करवाता है जिससे उस की राय में अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को खतरा उत्पन्न हो सकता है।

6. **प्रतिनिध्यात्मक कार्य :–** वह संयुक्त राष्ट्र संघ का प्रतिनिधित्व करता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के अंग

संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में अनु. 7 के अनुसार इसके प्रमुख अंग हैः–

1. महासभा 2. सुरक्षा परिषद् 3. न्यास परिषद्

4. सचिवालय 5. आर्थिक एवं सामाजिक परिषद्

6. अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय

महासभा :– यह संयुक्त राष्ट्र संघ की मुख्य व्यवस्थापिका है जिसमें सभी सदस्य राष्ट्रों के प्रतिनिधि सम्मिलित रहते हैं। प्रत्येक सदस्य राष्ट्र को अपने पाँच प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है किन्तु उसका मत एक ही होता है। महासभा का अधिवेशन वर्ष में एक बार होता है।

सुरक्षा परिषद् के आह्‌वान पर इसकी आपात बैठक कभी भी 24 घंटे की सूचना पर बुलाई जा सकती है। बैठक सितम्बर माह के तीसरे मंगलवार से मध्य दिसम्बर तक चलती है। महासभा द्वारा सुरक्षा परिषद के 10 अस्थाई सदस्यों आर्थिक तथा सामाजिक परिषद् के सभी सदस्यों प्रन्यास परिषद् के कुछ सदस्यों द्वारा अन्तर्राश्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीशों का चुनाव किया जाता है।

महासभा को अन्तर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा के उपाय मानवाधिकार जैसे सामान्य प्रश्नों पर विचार करने का अधिकार है। महासभा अपने अधिवेशन के आरम्भ में ही एक अध्यक्ष एवं सात उपाध्यक्ष निर्वाचित करती है जो अधिवेशन की समाप्ति पर्यन्त रहते है।

कार्य एवं शक्तियाँ :– चार्टर की धारा 10 से 17 तक में उसके कार्यों का विवरण है। इसके कार्य निम्नलिखित है –

1. अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा के लिए सहयोग करना।
2. संयुक्त राष्ट्र संघ का बजट पारित करना।
3. महासभा संयुक्त राष्ट्र के अन्य अंगों से रिपोर्ट प्राप्त करती है। उन पर विचार करती है।
4. यह सुरक्षा परिषद् के 10 अस्थाई सदस्यों, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के 15 न्यायाधीशों, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् के 54 सदस्यों का निर्वाचन करती है। सुरक्षा परिषद् के अनुमोदन पर महासचिव की नियुक्ति करती है।
5. यह सदस्य राज्यों के प्रवेश, निष्कासन और निलम्बन पर विचार करती है।
6. मानव कल्याण के लिए सहयोग करना।

इस प्रकार महासभा विश्व शांति और सुरक्षा कार्य करती है।

सुरक्षा परिषद :– यह एक प्रकार से संयुक्त राष्ट्र संघ की कार्यपालिका है। इसमें 15 सदस्य है। 5 स्थायी और 10 अस्थायी। स्थायी सदस्य देश चीन, फ्रांस रूसी संघ, ब्रिटेन व अमेरिका। प्रत्येक सदस्य राष्ट्र का एक प्रतिनिधि और एक वोट होता है। अस्थायी सदस्यों को दो वर्ष के लिए दो–तिहाई बहुमत से महासभा चुनती है। अस्थायी सदस्यों का निर्वाचन क्षेत्रीय आधार पर होता है।

सुरक्षा परिषद् संयुक्त राष्ट्र संघ का निरंतर कार्य करने वाला अंग है। यह स्थायी रूप से सत्र में रहता है। इसकी बैठक 14 दिन में एक बार होती है और यदि आवश्यकता हो अर्थात् अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को खतरा उत्पन्न हो जाए तो इसकी बैठक 24 घंटे की सूचना पर बुलाई जा सकती है।

स्थायी सदस्यता के लिए भारत ने भी 23 दिसम्बर 2004ई. को अपना दावा प्रस्तुत किया तथा भारत इसके लिए सशक्त दावेदार है।

सुरक्षा परिषद् के अधिकार एवं कार्य :– सुरक्षा परिषद के अधिकार व कार्य निम्नलिखित है–

1. यह महासभा के साथ अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के

न्यायाधीशों को चुनती है।

2. नये सदस्यों के प्रवेश पुराने सदस्यों के निष्कासन और की महासभा में संस्तुति करना।
3. अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को कायम रखने का प्रयास।
4. ऐसे विवाद के कारणों का पता लगाना जिससे विश्व शांति को खतरा की संभावना हो।
5. शस्त्रास्त्रों के नियमन की योजना बनाना।
6. किसी भी राष्ट्र के अनुचित कार्य एवं आक्रमण को रोकने के लिए स्वीकृत धन का उपयोग करना तथा आक्रमण के विरूद्ध सैनिक कार्यवाही करना।

निषेधाधिकार :— वीटो शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा से हुई है। वीटो का शब्दार्थ है — मैं मना करता हूँ। यदि कोई स्थायी सदस्य नकारात्मक मत देता है तो उसे निषेधाधिकार (वीटो) कहते हैं। इससे सुरक्षा परिषद उस प्रश्न पर निर्णय लेने में असमर्थ हो जाती है। वीटों के लिए आवश्यक है कि स्थायी सदस्य परिषद की बैठक में उपस्थित रहे उसकी अनुपस्थिति को वीटो नहीं माना जायेगा।

आर्थिक और सामाजिक परिषद :— इस परिषद् का कार्य संसार के गरीब, बीमार, निरक्षर तथा असहाय लोगों की सहायता करना, विश्व शांति स्थापित करना है। प्रारम्भ में इसके 18 सदस्य थे। 1966 में चार्टर में एक संशोधन द्वारा इसके सदस्यों की संख्या 27 कर दी गयी। तत्पश्चात् अनु. 61 का पुनः संशोधन हुआ जो 24 सितम्बर 1973ई. को लागू हुआ। इसके अनुसार अब संख्या 54 है। महासभा इसका चयन 3 वर्ष के लिए करती है। इसका अधिवेशन वर्ष में 3 बार होता है। परिषद् अपनी कार्य पद्धति के नियम स्वयं बनाती है एवं प्रतिवर्ष अपने अध्यक्ष का चुनाव करती है।

कार्य एवं शक्तियाँ :— जिस प्रकार सुरक्षा परिषद् विश्व को सुरक्षा प्रदान करती हैं वैसे ही आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् विश्व को अभाव से मुक्ति प्रदान करती है।

1. आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियों को उत्पन्न करना।
2. यह मानव अधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रताओं के आदर तथा लागू करने के लिए संस्तुति दे सकती है।
3. यह अपनी क्षमता में आने वाले विषयों से संबंधित अभिसमयों के अभिलेख महासभा को प्रेषित कर सकती है।
4. सुरक्षा परिषद् की प्रार्थना पर यह सुरक्षा परिषद को सूचनाएँ प्रेषित कर सकती है तथा सहायता कर सकती है।
5. महासभा द्वारा सौंपे गये कार्यों को सम्पादित करना।

प्रन्यास परिषद :— संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र में प्रावधान है कि इन प्रदेशों में जहा अभी पूर्ण स्वायत्त शासन नहीं है वहाँ के निवासियों के हितों की रक्षा के लिए अन्तर्राष्ट्रीय न्यास व्यवस्था कायम की जाए और अलग–अलग समझौतों के अनुसार इनको संयुक्त राष्ट्र संघ शासन के अधीन रखा जाए। ऐसे प्रदेशों को न्यास संगत प्रदेश कहते हैं।

न्यास परिषद के प्रदेश :— निम्नांकित श्रेणी के प्रदेश प्रन्यास प्रणाली के अन्तर्गत रखे गये है —

1. वे प्रदेश जो राष्ट्रसंघ के शासनान्तर्गत थे।
2. द्वितीय विश्व युद्ध में पराजित देशों से छीने गए प्रदेश।
3. राज्य के द्वारा अपनी इच्छा से सौपें गए प्रदेश।

न्यास परिषद के कार्य :— न्यास परिषद के कार्य निम्नलिखित है—

1. न्यासीय प्रदेशों की जनता की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा शिक्षा सम्बन्धी प्रगति के बारे में सूची तैयार करना।
2. प्रशासनिक सत्ताओं से प्राप्त रिपोर्टों की जाँच और उन पर विचार करना।
3. निरीक्षण के लिए न्यासीय प्रदेशों का दौरा करना।

नवम्बर 1994ई. में प्रन्यास परिषद् की यह सबसे बड़ी उपलब्धि है कि अधिकांश न्यास प्रदेश 15–20 वर्षों की अल्पावधि में ही स्वतंत्र हो गए। अमेरिका द्वारा प्रशासित प्रशांत द्वीप पलाउ के स्वतंत्र होने के साथ ही न्यास परिषद् के कार्य

लगभग समाप्त हो गये हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालयः– यह संयुक्त राष्ट्रसंघ की न्यायपालिका है। अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय का एक पृथक संविधान है जिसे अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय की संविधि कहा गया है। इस संविधि में पाँच अध्याय तथा 70 अनुच्छेद है। इसका मुख्यालय हेग (नीदरलैण्ड) में है। इसका गठन 15 न्यायाधीशों के द्वारा होता है जो 9 वर्षों के लिए महासभा एवं सुरक्षा परिषद के स्वतंत्र मतदान द्वारा निर्वाचन होता है, राष्ट्रीयता के आधार पर नहीं। पंद्रह में से पाँच न्यायाधीश प्रत्येक तीन वर्ष बाद सेवानिवृत्त होते हैं। सभी न्यायाधीश स्वयं अपना अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष तीन वर्ष के लिए चुनते हैं। अन्तर्राश्ट्रीय न्यायालय में निर्णय उपस्थित न्यायाधीशों के बहुमत के आधार पर होता है तथा 9 सदस्यों की उपस्थित से कोरम पूरा होता है। न्यायाधीशों को अनेक विशेषाधिकार सौंपे जाते है। उनको राजनमिक उन्मुक्तियाँ प्रदान की जाती है। न्यायालय के सम्मुख वादियों के प्रतिनिधियों, परामर्शदाता और वकीलों को भी स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करने की छूट दी जाती है। इस न्यायालय में राज्य ही वाद प्रस्तुत कर सकता है। किसी व्यक्ति को दावा दायर करने का अधिकार नहीं है।

क्षेत्राधिकार :– इसको तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. ऐच्छिक क्षेत्राधिकार – ऐसे विवाद जिन्हें दोनों पक्ष सहमत होकर न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करते हैं।

2. अनिवार्य क्षेत्राधिकार – राज्य स्वयं घोषणा करके इन क्षेत्रों में न्यायालय के आवश्यक क्षेत्राधिकार को स्वीकार कर लेता है। ये हैं – संधि की व्याख्या, अन्तर्राष्ट्रीय कानून के क्षेत्र से संबंधित सभी मामले, किसी अन्तर्राष्ट्रीय विधि के उल्लंघन पर क्षतिपूर्ति का रूप और परिणाम।

3. परामर्शात्मक क्षेत्राधिकार– महासभा अथवा सुरक्षा परिषद किसी भी कानूनी प्रश्न पर अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय का परामर्श मांग सकती है। न्यायालय का परामर्श केवल परामर्श होता है जिसे मानने के लिए किसी भी राज्य को बाध्य नहीं किया जा सकता है।

अपनी परीसीमाओं के बावजूद अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय ने अपना काम कुशलता से किया है तथा अन्तर्राष्ट्रीय विधि के विकास में योगदान दिया है।

सचिवालय :– सचिवालय संयुक्त राष्ट्र संघ के छः प्रमुख अंगों में से एक है। संयुक्त राष्ट्र संघ का महासचिव इसका मुख्य प्रशासनिक अधिकारी होता है। महासभा के बनाए नियमों के अनुसार महासचिव सचिवालय के कर्मचारियों की नियुक्ति करता है। नियुक्ति के पश्चात् अपने कार्यालय में सचिवालय के सभी कर्मचारी विश्व नागरिक हो जाते है। सचिवालय के विषय में मैकसवेल कोहल ने लिखा है ''संयुक्त राष्ट्र के अन्य अंगों की अपेक्षा कहीं अधिक महत्व वाला अंग सचिवालय ही है, जो महासभा एवं सुरक्षा परिषद् के अधिवेशनों को वास्तविक, स्थायी एवं शाश्वत स्वरूप प्रदान करता है।'' त्रिग्वेली संयुक्त राश्ट्र संघ के प्रथम महासचिव बने। वे नार्वे के रहने वाले थे। 1946 ई. से 1952 ई. तक महासचिव रहे। वर्तमान संयुक्त राष्ट्र संघ महासिचव पद पर बान की मून (द. कोरिया) है जो जनवरी 2007 से कार्यरत है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के विशिष्ट निकाय

संयुक्त राष्ट्र संघ के कई विशिष्ट निकाय हैं जो सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय कल्याण के क्षेत्र में कार्यरत है। इनकी अपनी कार्यप्रणाली एवं अपने कार्यालय है। ये मुख्य रूप से निम्नलिखत हैं –

1. संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक संगठन :– (यूनेस्को) इसकी स्थापना 4 नवम्बर, 1946 ई. को हुई थी। यूनेस्को का मुख्य उद्देश्य है शिक्षा, विज्ञान तथा संस्कृति के माध्यम से न्याय, विधि के शासन की स्थापना एवं मानवीय अधिकार और मौलिक स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान उत्पन्न करना एवं शांति और सुरक्षा, के क्षेत्र में योगदान देना। इसने विश्व में आधारभूत शिक्षा के विकास पर अधिक जोर दिया है। विश्व में विज्ञान के क्षेत्र में नये प्रयोग, ज्ञान को सर्वत्र उपयोगी और उपलब्ध कराना इसका कार्य है। सामाजिक क्षेत्र में शोध कार्य को प्रोत्साहन देना तथा राष्ट्रों में असत्य धारणाओं को दूर करना तथा सांस्कृतिक क्षेत्र में विभिन्न कलाओं का

विकास और संरक्षण देना भी इसके मुख्य कार्य है। इसका मुख्यालय पेरिस (फ्रांस) में है।

2. अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठनः—. इसकी स्थापना प्रथम विश्व युद्ध के बाद 11 अप्रेल 1919 ई. को वर्साय संधि के आधार पर हुई थी जिसका मुख्यालय जेनेवा में है। यह राष्ट्र संघ की एक शाखा के रूप में काम करता था। 14 दिसम्बर, 1946 ई. में यह संयुक्त राष्ट्र संघ का विशिष्ट निकाय बना। इसका मुख्य उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय कार्य द्वारा मजदूरों के स्तर में सुधार करना तथा आर्थिक एवं सामाजिक सुदृढ़ता को प्रोत्साहन देना है। यह विश्व के मजदूरों से सम्बन्धित सूचनाओं का संग्रह करता है और रिपोर्ट प्रकाशित करता है। 1969 में शान्ति का नोबेल पुरस्कार इसी संगठन को मिला था।

3. खाद्य एवं कृषि संगठन :— इसकी स्थापना 16 अक्टूबर 1945ई. में खाद्य एवं कृषि सम्बन्धी संयुक्त राष्ट्र संघ सम्मेलन क्युबेक सिटी (कनाडा) के फलस्वरूप हुई। इसको 14 दिसम्बर 1946ई. को संयुक्त राष्ट्र संघ का विशिष्ट अभिकरण बनाया। इसका कार्य खाद्य पदार्थों के उत्पादन तथा वितरण की क्षमता में वृद्धि करना एवं ग्रामीण जनसंख्या के रहन–सहन के स्तर को सुधारना है। यह निकाय सदस्य देशों को अनेक प्रकार की फसलों के बीज भी देता है। इसका मुख्यालय रोम में है।

4. विश्व स्वास्थ्य संगठन :— इसकी स्थापना 7 अप्रैल 1948ई. को हुई। इसका उद्देश्य विश्व के देशों की आम जनता को स्वास्थ्य की उच्चतम दशा को प्राप्त करवाना था। यह सदस्य देशों को स्वास्थ्य के स्तर को सुधारने के लिए सहायता देता है। यह अनेक रोगों के उपचार के लिए गतिविधियों का संचालन करता है। इसने चेचक, हैजा, तपेदिक, आदि के उन्मूलन के लिए भरसक प्रयास किए। इसका मुख्यालय जेनेवा में है।

5. अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष :— इस संगठन की स्थापना दिसम्बर 1945 में की गई। इसका मुख्यालय वाशिगटन में है। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का उद्देश्य एक ऐसी प्रणाली का विकास करना है जिससे सदस्य देशों को विदेशी विनिमय की सुविधा मिले। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहन मिले। सदस्य देशों की आर्थिक उन्नति करना, इसका प्रमुख कार्य है।

इसके चार प्रमुख अंग है :–

1. संचालक मण्डल, 2. कार्यवाहक निदेशक, 3. प्रबन्धकारी निदेशक 4. कार्यालय

6. अन्तर्राश्ट्रीय पुनर्निर्माण एवं विकास बैंक :— इसे विश्व बैंक भी कहा जाता हैं। विश्व बैंक का कार्य जून 1946 से प्रारम्भ हुआ। वही देश विश्व बैंक का सदस्य हो सकता जो अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का सदस्य होता है। इसका मुख्यालय वाशिगटन डी.सी. में है। यह उत्पाद कार्यों के लिए पूंजी की व्यवस्था करती है। निजी विदेशी पूंजी नियोजन को प्रोत्साहन देता है। यह सदस्य राज्यों की आर्थिक सुविधाओं के विकास के लिए धन उधार देता है। विश्व बैंक ने युद्ध में क्षतिग्रस्त तथा विकासशील राष्ट्रों के लिए सराहनीय कार्य किए।

7. संयुक्त राष्ट्र बाल संकट कोषः— द्वितीय विश्व युद्ध के बाद शिशुओं को राहत पहुचाने के उद्देश्य से इसकी स्थापना 1946 में की गई। यह अपने संक्षिप्त नाम यूनीसेफ के नाम से लोक प्रिय है। इसका मुख्यालय न्यूयार्क में है। इसका उद्देश्य स्वास्थ्य और पोषण आदि कार्यक्रमों के माध्यम से बाल कल्याण कार्यों को प्रोत्साहन देना है। यह व्यक्तियों तथा सरकारों से धन दान में लेकर एक कोष का निर्माण करता है। जिससे विश्व के बालकों की सहायता की जा सकती है। इसने अनेक देशों में बीमारियों से बालकों की रक्षा करने की योजनाओं में सहायता की है। इसके अलावा यह भूकम्प, बाढ़ आदि परिस्थितियों में बालक और उनकी माताओं के लिए अपेक्षित सहायता करता है। 1965 ई. में इसे शान्ति का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया।

8. विश्व व्यापार संगठनः— इसकी स्थापना 1 जनवरी 1995 ई. को की गई, जिसका मुख्यालय जेनेवा में है। यह विश्व व्यापार पर नजर रखती है। इसका मुख्य उद्देश्य विश्व व्यापार को लचीला बनाना है।

यह व्यापार एवं प्रशुल्क से सम्बन्धित किसी भी भावी मसले पर विचार विमर्श हेतु एक मंच के रूप में कार्य करता है। विश्व में संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग करता है।

9. मानव अधिकार घोषणा पत्र :— 10 दिसम्बर, 1948 को महासभा ने मानव अधिकारों का विश्व घोषणा पत्र स्वीकार

किया। यह घोषणा एक विस्तृत और विषम दस्तावेज है। अपने 30 अनुच्छेदों में यह घोषणा मूल मानवाधिकारों तथा स्वतन्त्रताओं का विस्तृत विवरण है। इसमें मूलवंश वर्ण, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक विचार, राष्ट्रीय उद्भव, सम्पत्ति जन्म या अन्य परिस्थितियों के आधार पर कोई विभेद नहीं किया गया है। मानवाधिकार मानव को भयमुक्त और भूखमुक्त जीवन सुनिश्चित करने में सहायता देता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की उपब्धियाँ

संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना का मुख्य उद्देश्य :– 'अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा' बनाये रखना है। संयुक्त राष्ट्र संघ को राजनीतिक विवादों को हल करने में उतनी सफलता नही मिली जितनी आर्थिक और सामाजिक कार्य क्षेत्र में। विश्व भर के बच्चों, विकलांगों और नेत्रहीनों के लिए जो कुछ किया वह सर्वविदित है। संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना से मानवता को तृतीय महायुद्ध का भीषण रूप देखने को नही मिला। इसने कई बार उत्पन्न होने वाले संकटों को युद्ध में परिणत होने से बचाया है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की निम्न उपलब्धियां है–

1. इजरायल – फिलिस्तीन विवादों में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मध्यस्थता कर इजरायल राज्य का निर्माण करवाया गया।
2. कश्मीर के प्रश्न को लेकर भारत–पाक के बीच अनेक बार युद्ध की स्थिति बनने पर रोकना।
3. इण्डोनेशिया के विवाद में मध्यस्थता के परिणाम स्वरूप वहाँ से नीदरलैण्ड की सेनाओं की वापसी सम्भव हुई और इण्डोनेशिया एक स्वतंत्र गणराज्य बन सका।
4. सैनिक कार्यवाही द्वारा उत्तरी कोरिया के आक्रमण से दक्षिण कोरिया की रक्षा की गई।
5. मानवीय अधिकारों का सार्वभौमिक घोषणा पत्र का प्रस्ताव 10 दिसम्बर, 1948 को पारित कर विश्व के नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों को देने के लिए सदस्य राज्यों को निर्देश देना।
6. फ्रांस, ब्रिटेन और इजराइल ने जब 1956 में मिस्त्र पर आक्रमण किया तब यह मिस्त्र में युद्ध बन्द कराने तथा विदेशी सेनाएं हटाने में पूरी तरह सफल रहा।
7. संयुक्त राष्ट्र संघ के निरन्तर प्रयत्नों से एशिया और अफ्रीका से उपनिवेशवाद का अन्त हुआ।
8. 1962 में क्यूबा संकट को हल किया।
9. 1964 को साइप्रस में कानून और व्यवस्था स्थापित करने में संघ की शान्ति सेना को सफलता मिली।
10. निःशस्त्रीकरण द्वारा विश्व में हथियारों की दौड़ को रोकने का प्रयास किया।
11. बहुराष्ट्रीय सेना द्वारा बल प्रयोग कर 1991 इराक के अनाधिकृत कब्जे से कुवैत की मुक्ति करना।
12. यह विस्थापितों और शरणार्थियों के लिए वरदान रहा।
13. रासायनिक हथियारों पर प्रतिबन्ध के सिलसिले में अहम भूमिका निभाई।
14. पूर्वी तिमोर की स्वतंत्रता में अहम भूमिका निभाई।

नेल्सन मंडेलाः–

नेल्सन मंडेला जैसे दृढ़ता और संकल्प के धनी व्यक्तित्व का जन्म नस्ल भेद से पीड़ित दक्षिणी अफ्रीका के अश्वेत लोगों के लिए एक मसीहा के रूप में प्रकट हुआ। उसका

नेल्सन मंडेला (1918ई.–2013ई.)

जन्म 18, जुलाई, 1918 में दक्षिण अफ्रीका के नेल्सन, नामक स्थान पर हुआ। स्वयं अश्वेत परिवार से था। अतः बाल्यकाल से रंगभेद की नीति का विभत्स रूप देखा। अपने समाज पर गोरे लोगो के अत्याचारों की निकटता से अनुभव किया और बचपन से ही इस भेदभाव को समाप्त करने को कृत संकल्प हुए आया। दक्षिणी अफ्रीका में नस्लवाद पूरे रंग पर था। शिक्षण संस्थायें हो अथवा मनोरंजन स्थान रेल, पार्क आदि स्थलों पर सर्वत्र भेदभाव था। उनकी शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं था। मण्डेला भाग्यशाली था, क्योंकि वह अपने परिवार का प्रथम व्यक्ति था जिसने स्कूल देखा। किन्तु नो वर्ष की आयु में उसने अपने पिता को खो दिया। अब पढ़ाई में बाधा आने की पूरी सम्भावना थी, किन्तु मण्डेला की तीव्र इच्छा शक्ति से इस बाधा को पार कर लिया। पढ़ने के साथ खेलकूद में भी वह रूचि लेने लगा। बॉक्सिंग उसका प्रिय खेल था। स्कूल शिक्षा पूर्ण करने पर 1939 में उसे कॉलेज में प्रवेश मिल गया। द्वितीय वर्ष में वह विद्यार्थी प्रतिनिधि परिषद का सदस्य बन गया। किन्तु जातिगत भेदभाव का विरोध करने पर उसे संस्था से निष्कासित कर दिया। मण्डेला को इस घटना ने हीनता के स्थान पर दृढ़ता प्रदान की।

आन्दोलन रत मण्डेलाः— अपने विचारों को गति देने के लिए किसी भी संस्था का सदस्य होना आवश्यक लगा। अतः अफ्रीका राष्ट्रीय कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण कर ली। इसको जन आन्दोलन का मंच बनाने में प्रयासरत हो गया। इसके लिए नवयुवक संगठन होना जरूरी माना गया। अतः यूथलीग संस्था का निर्माण किया गया। इसके माध्यम से असहयोग, बहिष्कार जैसे कदम उठाने का निश्चय किया। मण्डेला की गतिविधियाँ प्रशासन से छिपी न रह सकी। सरकार ने मंडेला व उसके 150 साथियों को बन्दी बना लिया। जेल में रहते हुए हर क्षण रंगभेद की नीति को समाप्त करने के तरीकों पर चिंतन करने लगे। उसको यह विश्वास हो गया कि शांतिपूर्ण ढंग से व्यवस्था में परिवर्तन नहीं हो सकता। अब उसका झुकाव सैनिक संघर्ष की तरफ होने लगा। 1961 में मंडेला को पांच वर्ष की सजा दी गई। सजा के दो वर्ष पश्चात ही मंडेला पर पुनः मुकदमा चलाया गया और इस बार उसको आजन्म कैद की सजा सुना दी गई।

नीति परिवर्तन को सरकार बाध्यः— मंडेला का विरोध रंग लाया। दक्षिणी अफ्रीका की रंगभेद की नीति का चारो ओर से आलोचना होने लगी। राष्ट्रमण्डल की सदस्यता छोड़ने की घोषणा से दक्षिण अफ्रीका निष्कासन से बच सका। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी आर्थिक बहिष्कार का प्रस्ताव पारित किया। अन्तर्राष्ट्रीय विरोध और दक्षिणी अफ्रीका के राष्ट्रपति डि क्लार्क की समझौतावादी नीति ने नये वातावरण का मार्ग प्रशस्त किया। 27 वर्ष जेल में बंदी जीवन व्यतीत करने वाले मंडेला को हटा दिया। इन कारणों से सरकार एवं अश्वेत प्रतिनिधियों के मध्य वार्ता का वातावरण बना। राष्ट्रपति डी क्लार्क तथा मंडेला की बातचीत का सकारात्मक परिणाम निकला। लोकतांत्रिक संविधान का निर्माण हुआ जिसके अन्तर्गत दक्षिणी अफ्रीका में निर्वाचन हुआ। इसमें दक्षिण अफ्रीका कांग्रेस की विजय हुई। मंडेला को राष्ट्रपति चुना गया। इस प्रकार 1994 से वे दक्षिण अफ्रीका के प्रथम अश्वेत राष्ट्रपति बने। राष्ट्रपति का कार्य चुनौति भरा था जिसका सामना साहस से किया। पूर्व मतभेद विस्मरण कर सभी को साथ लेने की नीति का पालन किया परिणामस्वरूप 5 वर्ष के पश्चात् होने वाले चुनाव में मंडेला का दक्षिण अफ्रीका कांग्रेस को बहुमत मिला। किन्तु दुबारा राष्ट्रपति बनने के आग्रह को अस्वीकार कर राजनीति से सन्यास ले लिया। उसकी महान उपलब्धियों के कारण विश्वभर में उसे अनेक पुरस्कारों व सम्मानों से नवाजा गया। जिसमें नोबल शांति पुरस्कार मुख्य है। भारत ने पहले 'नेहरू शांति पुरस्कार और तत्पश्चात् अपना सर्वोच्च सम्मान भारत रत्न देकर सम्मानित किया। संयुक्तराष्ट्र संघ ने 18 जुलाई 2009 को मंडेला दिवस घोषित करने का प्रस्ताव पारित किया। मंडेला अच्छे लेखक भी थे। उनकी महत्वपूर्ण पुस्तक उनकी आत्मकथा है। ये बहुमुखी प्रतिभा के घनी मंडेला की जीवन लीला 2013 में समाप्त हो गई, किन्तु अन्याय तथा अत्याचारों के विरूद्ध संघर्षरत जनता के आज भी प्रेरणादायक है।

संयुक्त राष्ट्र की असफलताएँ

संयुक्त राष्ट्र संघ से जो हमें उम्मीद थी, वह सफलता नही मिली। यह विभिन्न देशों में विध्वसंक हथियारों के निर्माण को नही रोक पाया। स्वतन्त्रता और भ्रातृभाव की भावना सभी जगह नही हुई। आज भी कही जातीय भेदभाव तथा उपनिवेश के अवशेष बचे हुए हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय कानून बनाये गए उनका उल्लघंन व अवहेलना को रोक नही सका। वस्तुतः इसकी असफलता का मूल कारण विश्व का राजनैतिक वातावरण है। बोस्निया, सोमालिया और रवांडा में शान्ति अभियानों में विशेष सफलता नही मिली। रवांडा में खून—खराबे के दौरान ही अपने

शांति सैनिक वापिस बुला लिए। विश्व की महाशक्तियों ने अनेक अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को सुलझाने के लिए सीधे द्विपक्षीय परामर्श का सहारा लिया। इसकी निम्नलिखित असफलताऐं हैः—

1. निःशस्त्रीकरण, आणविक शक्ति तथा हथियारों एवं परम्परागत सेनाओं में कमी करने पर कोई समझौता नही हो पाया।
2. कश्मीर विवाद अभी तक बना हुआ है।
3. कोरिया अभी तक विभक्त है दोनों के बीच तनाव बना हुआ है।
4. युद्धों को रोकने में विफल बना हुआ है।
5. सी.टी.बी.टी. को अभी तक प्रभावी नहीं बनाया जा सका।
6. आतंकवाद को रोकने में सफल नही रहा।

संयुक्त राष्ट्र संघ तथा विश्व शान्ति में भारत का योगदान :— प्राचीन सभ्यता तथा संस्कृति वाले देश भारत की अत्यन्त गौरवशाली सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परम्परा रही है। प्राचीन काल से ही अन्य देशों के साथ सम्बन्ध शान्ति और मैत्री के सिद्धान्तों पर आधारित है। हमोर प्राचीन ग्रंथों, वेदों और उपनिषदों में भी विश्व कल्याण व शान्ति की कामना की गई , जिसकी सुन्दर अभिव्यक्ति अथर्ववेद के इस श्लोक में होती है।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणी पश्यन्तुः मा कश्चिद् दुःख भाग भवेत।

भारत ने प्रारम्भ से ही इस विश्व संस्था को अपना पूर्ण समर्थन प्रदान किया तथा संयुक्त राष्ट्र की घोषणा पर हस्ताक्षर कर इसका संस्थापक सदस्य बना। आजादी के पश्चात् भारत छः बार संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का अस्थायी सदस्य निर्वाचित हुआ है तथा इसकी स्थायी सदस्यता का सशक्त दावा कर रहा है। भारत ने श्रम संगठन खाद्य व कृषि संगठन, विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं यूनेस्को में सक्रिय भूमिका निभाई है। अनेक भारतीय संयुक्त राष्ट्र संघ के महत्वपूर्ण पदों पर कार्य कर चुके हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के महासभा के आठवें अधिवेशन की अध्यक्ष श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित को चुना तथा डा. राधाकृष्णन और मौलाना अब्दुल कलाम आजाद ने यूनेस्को के प्रधान के पद को शोभित किया। अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के पद पर डा. नगेन्द्र सिंह एवं अणुशक्ति के शान्ति पूर्ण उपयोग हेतु गठित कमीशन के पद पर डॉ. एच.जे. भाभा नियुक्ति हुए।

राजकुमारी अमृत कौर विश्व स्वास्थ्य संगठन की अध्यक्षा रही। श्री गौतम काजी पहले भारतीय है जिन्हें विश्व बैंक का प्रबन्ध निदेशक नियुक्त किया गया है। एम.एस. सुबुलक्ष्मी जिन्होंने संयुक्त राष्ट्र दिवस पर 1966 में महासभा में अपना शास्त्रीय संगीत कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

अभ्यासार्थ प्रश्न

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

प्र.1 राष्ट्र संघ की स्थापना में किस अमेरिकी राष्ट्रपति का सर्वाधिक योगदान रहा?

प्र.2 आर्थिक मंदी से उबरने के लिए न्यू डील की नीति किसने अपनाई?

प्र.3 इटली में फॉसीवाद का नेता कौन था?

प्र.4 लोसाने की संधि कब एवं किन देशों के मध्य हुई थी?

प्र.5 स्वास्तिक किस दल का प्रतीक चिन्ह था?

प्र.6 हिटलर द्वारा लिखी पुस्तक का नाम क्या है?

प्र.7 द्वितीय विश्व युद्ध कब आरम्भ हुआ था?

प्र.8 परमाणु बम का प्रयोग सर्वप्रथम किस राष्ट्र द्वारा किया गया?

प्र.9 सुरक्षा परिषद् में कुल कितने सदस्य होते हैं?

प्र.10 ''निषेधाधिकार'' से क्या तात्पर्य है?

लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्र.1 ''मेण्डेट व्यवस्था'' क्या थी?

प्र.2 आर्थिक मंदी के प्रभाव लिखिए।

प्र.3 इटली में फासीवाद के उदय के प्रमुख कारण क्या थे?

प्र.4 रोम–बर्लिन–टोक्यो धुरी से आप क्या समझते हैं?

प्र.5 नाजीवाद के प्रमुख विचार लिखिए।

प्र.6 तुष्टीकरण की नीति से आप क्या समझते हैं?

प्र.7 गुट निरपेक्षता पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

प्र.8 संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता ग्रहण करने के लिए आवश्यक शर्ते लिखिये।

प्र.9 संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव के कार्य लिखिए।

प्र.10 मानव अधिकार घोषणा पत्र क्या है?

निबन्धात्मक प्रश्न

प्र.1 राष्ट्रसंघ के प्रमुख उद्देश्य, अंगों का वर्णन करते हुए उसकी असफलता के कारण लिखिये।

प्र.2 आर्थिक मंदी के प्रमुख कारण एवं परिणाम लिखिये।

प्र.3 नाजीवाद के उदय के कारण एवं उसके परिणाम लिखिये।

प्र.4 द्वितीय विश्व युद्ध के कारण एवं परिणाम लिखिये।

प्र.5 संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रमुख अंगों एवं उसके विशिष्ट निकायों के कार्यों का वर्णन कीजिए।